नौ देवियों की अमर कहानी

(नवरंग-संस्करण)

नौ देवियों की अमर कहानी

नैना देवी
चिन्तपुर्णी

ज्वाला जी
वज्रेश्वरी देवी

वैष्णो देवी
चामुण्डा देवी

मनसा देवी
कालिका देवी

शाकुम्भरी देवी

माता के नौ दरबारों की सम्पूर्ण यात्रा—प्रत्येक स्थान के महात्म्य, पौराणिक कथा, इतिहास, अन्य उपयोगी विवरण एवं सूचनाएँ, आरतियाँ, भेंटें व पचास से भी अधिक रंगीन चित्रों से सुसज्जित प्रकाशन।

मूल्य ८ रु० ५० पैसे केवल

महामाया भगवती जगदम्बा के भक्तों के लिए उत्तम ग्रन्थ
(सरल हिन्दी में)
देवी के आराधक के लिए विश्व में कोई भी पदार्थ दुर्लभ नहीं रहता। अतः आत्म कल्याण के अभिलाषी मनुष्यों को अन्यत्र भटकना छोड़कर 'श्रीमद्देवी भागवत पुराण' का पाठ करना चाहिए।
प्राप्ति स्थान—
१. पुस्तक संसार, १६८-१६६, नुमायश का मैदान, जम्मू १८०००१
२. पुस्तक संसार, बड़ा बाजार, हरिद्वार २४६४०१
३. रणधीर बुक सेल्स, छोटा जोगीवाड़ा, हरिद्वार २४६४०१
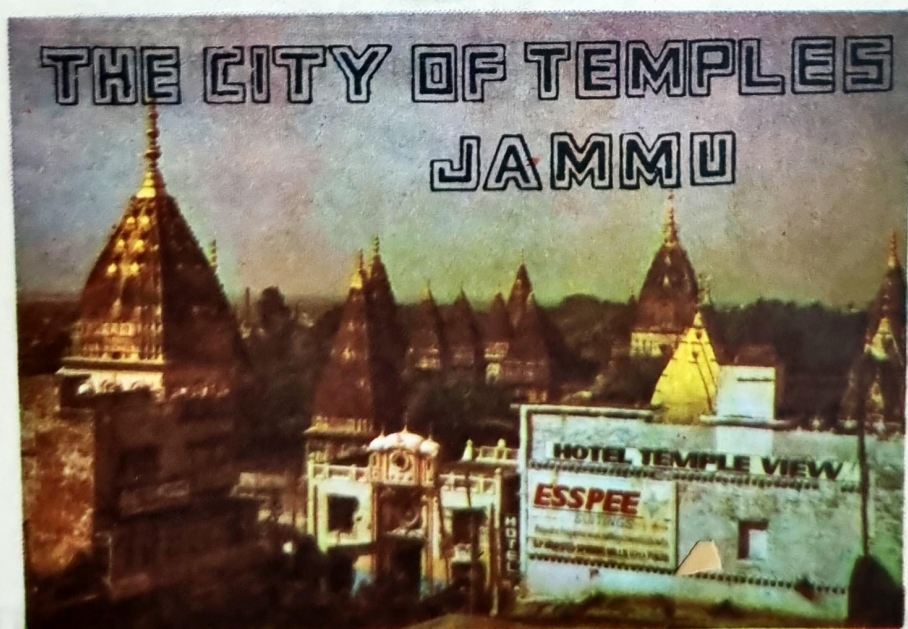
या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः

—दुर्गासप्तशती

जो देवी सर्व भूत-प्राणियों में शक्ति रूप होकर निवास करती है, उसको मेरा बारम्बार नमस्कार है ।

देवी की पूजा क्यों ?

देवीपुराण की एक कथा में ऐसा प्रसङ्ग मिलता है कि एक बार नारद जी को यह शंका उत्पन्न हुई कि तीनों देवता (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) सदैव किसकी उपासना किया करते हैं ? सन्देहवश होकर नारदमुनि ने शिवजी से पूछा—मुझे ब्रह्मा, विष्णु और आपसे बढ़कर पूज्य कोई अन्य देवता तो मालूम नहीं है ।

फिर आपसे ऊँचा और कौन है, जिसकी आप भी आराधना करते हैं ?

शिवजी बोले—हे मुनिवर ! सूक्ष्म एवं स्थूल शरीर से परे जो महाप्राण आदिशक्ति हैं, वह स्वयं पारब्रह्म स्वरूप हैं। वह केवल अपनी इच्छा मात्र से ही सृष्टि की रचना, पालन एवं संहार करनें में समर्थ हैं। वास्तव में, यद्यपि वह निर्गुण स्वरूप हैं, तथापि समय-२ पर धर्म की रक्षा एवं दुष्टों के नाश हेतु उन्होंने पार्वती, दुर्गा, काली, चण्डी, वैष्णों एवं सरस्वती के रूप में अवतार धारण किये हैं। श्री शंकर जी आगे कहते हैं कि हे नारद ! अधिकतर यह भ्रम होता है कि यह देवी कौन है ? और क्या वह पारब्रह्म से भी बढ़कर है ? श्रीमद्देवीभागवत में ब्रह्मा जी के एक प्रश्न के उत्तर में स्वयं देवी ने ऐसा कहा है "एक ही वास्तविकता है, और वह है सत्य ! मैं ही सत्य हूं। मैं न तो नर हूं, न ही नारी और न ही कोई ऐसा प्राणी हूं जो नर या मादा हो। अथवा नर-मादा भी न हूँ, ऐसा भी कुछ नहीं है। परन्तु कोई भी वस्तु ऐसी नहीं जिसमें मैं विद्यमान नहीं ! मैं प्रत्येक भौतिक वस्तु तथा शरीर में शक्ति के रूप में रहती हूँ।"

श्री देवी पुराण में ही एक स्थान पर विष्णु भगवान् यह स्वीकार करते हैं कि वह मुक्त नहीं हैं और केवल महादेवी की आज्ञा का पालन करते हैं। यदि ब्रह्मा सृष्टि की रचना करते हैं, विष्णु पालन करते हैं, और शिवजी संहार करते हैं, तो वह केवल यन्त्र की भांति कार्यरत हैं। ठीक उसी प्रकार जैसे कि मशीन अपना काम कर रही होती है। उस यन्त्र या मशीन की संचालनकर्ता महादेवी ही हैं। संसार मानो कठपुतली का कोई तमाशा है और उसकी डोरी स्वयं देवी के हाथों में है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी—शक्ति या ऊर्जा के बिना प्राणी निर्जीव है। अतः सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड देवी का प्रतिबिम्ब अथवा छाया-

मात्र है। समस्त भौतिक पदार्थों एवं जीवों में शक्ति (देवी) द्वारा ही चेतना वह प्राण का संचार होता है। इस नश्वर संसार में चेतना के रूप में प्रकट होने से देवी को 'चितस्वरूपनी' माना जाता है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश सहित अन्य सभी देवता कालान्तर में नाशवान हो सकते हैं, परन्तु देवी-शक्ति सदैव अजन्मा और अविनाशी हैं, वही आदि-शक्ति हैं और अनन्त हैं।

श्रीमद्भागवत पुराण में महर्षि वेद-व्यास राजा जन्मेजय को कहते हैं—हे जन्मेजय ! आप इस बात में लेशमात्र भी सन्देह न रखें.................. जिस प्रकार एक जादूगर अपनी गुड़ियों का खेल रचाता है, उसी प्रकार महादेवी अपनी इच्छा और शक्ति द्वारा चल-अचल भौतिक प्राणियों व वस्तुओं की रचना या संहार किया करती हैं। इसी कारण वह सभी मनुष्यों और देवताओं द्वारा भी पूज्य हैं।

माता का विराट् रूप कैसा है ?

माता का विराट् रूप : आंखे मूंदकर मनन कीजिए कि हजारों कमल-पुष्प एकदम खिल उठे ! सोचिए कि एक हजार सूर्य एक ही आकाश-मण्डल में एक साथ उदय हो गए !! ऐसा है उसका रूप, ऐसा है उसका तेज। सूर्य और चन्द्र उसके दोनों नेत्र हैं। नक्षत्र आभूषण हैं, हरी-भरी धरा का सिंहासन और नीला आकाश उस पर छत्रछाया है। सिन्दूरी-लाल सुए रंग के फूलों में उसका रूप झलकता है। अस्ताचल को जाते हुए रक्तावरण सूर्य में भी वही दीप्तीमान है। हिमपात के कारण सफेद चादर से ढके हुए पर्वतों में विराजमान हैं। श्वेत हंस वाहन पर श्वेत-वस्त्र धारण किए सरस्वती के रूप में शोभायमान है। स्त्रियों की लज्जा में, योद्धाओं के आक्रोश में और विकराल काल-ज्वाला की लपटों रूपी जिह्वा में दमक रही है। अम्बा के रूप में मां का स्नेह उड़ेल देती है, जैसे किसी शिशु को स्तनपान करते हुए अपनी ममतामयी मां का स्नेह मिल रहा हो। त्रिपुर सुन्दरी के रूप में अद्वितीय सम्मोहन है। और महाकाली के रूप में नरमुण्डों की माला पहने भयानक नृत्य करती है। यद्यपि वह निर्गुण है तथापि समय-समय पर दुष्टों के नाश के लिए अवतार धारण करती है।

देवी की उत्पत्ति

दुर्गा सप्तशती के दूसरे अध्याय में देवी के इस स्वरूप का विस्तृत वर्णन मिलता है। असुरों के अत्याचार से तंग आकर देवताओं ने जब ब्रह्मा जी से सुना कि दैत्यराज को वर प्राप्त है कि उसकी मृत्यु किसी कुंवारी कन्या के हाथ से होगी तो सब देवताओं ने अपने सम्मिलित तेज से देवी के इस रूप को प्रकट किया। विभिन्न देवताओं की देह से निकले हुए इस तेज से ही देवी के विभिन्न अंग बने।

भगवान शंकर के तेज से उस देवी का मुख प्रकट हुआ, यमराज के तेज से मस्तक के केश, विष्णु के तेज से भुजायें, चन्द्रमा के तेज से स्तन, इन्द्र के तेज से कमर, वरुण के तेज से जंघा, पृथ्वी के तेज से नितम्ब, ब्रह्मा के तेज से चरण, सूर्य के तेज से दोनों पैरों की उँगलियाँ, वसुओं के तेज से दोनों हाथ की उँगलियाँ, प्रजापति के तेज से सारे दाँत, अग्नि के तेज से दोनों नेत्र, संध्या के तेज से भौंहें, वायु के तेज से कान और अन्य देवताओं के तेज से देवी के भिन्न-भिन्न अंग बने।
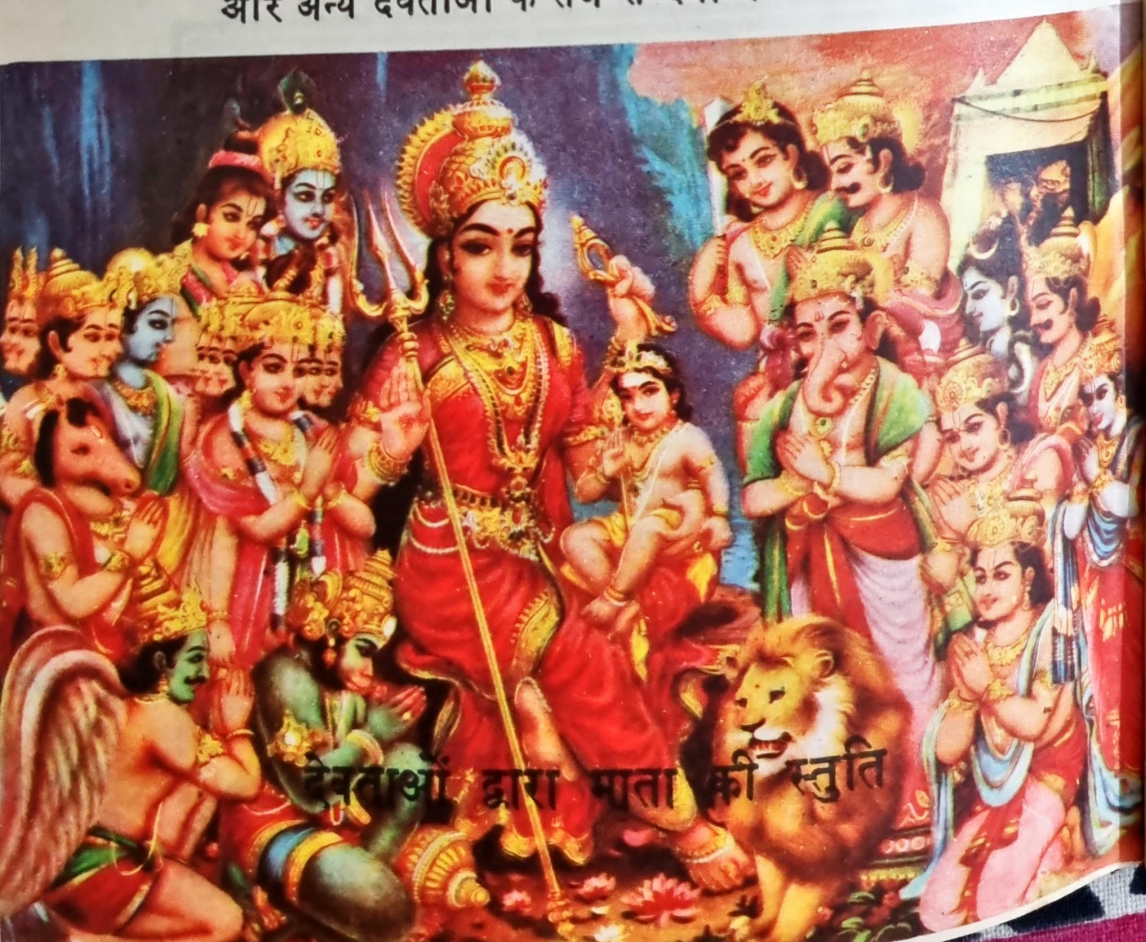
देवताओं द्वारा माता की स्तुति

१८ भुजा सहित माता का विराट रूप

शिवजी ने उस महाशक्ति को अपना त्रिशूल दिया, लक्ष्मीजी ने कमल का फूल, विष्णु ने चक्र, अग्नि ने शक्ति व बाणों से भरे तरकश, यमराज ने दण्ड, काल ने तलवार, विश्वकर्मा ने निर्मल फरसा, प्रजापति ने स्फटिक मणियों की माला, वरुण ने दिव्य शंख, हनुमान जी ने गदा, शेषनागजी ने मणियों से सुशोभित नाग, इन्द्र ने वज्र, भगवान राम ने धनुष, वरुणदेव ने पाश व तीर, ब्रह्माजी ने चारों वेद तथा हिमालय पर्वत ने सवारी के लिए सिंह प्रदान किया। इसके अतिरिक्त समुद्र ने बहुत उज्ज्वल हार, कभी न फटने वाले दिव्य वस्त्र, चूड़ामणि, दो कुण्डल, हाथों के कंगन, पैरों के नूपुर तथा अंगूठियाँ भेंट की। इन सब वस्तुओं को देवी ने अपनी अठारह भुजाओं में धारण किया। इसी स्वरूप को चित्र में दर्शाया गया है।

नौ देवियों की अमर कहानी

श्री दुर्गा जी की नौ मूर्तियाँ हैं जिन्हें नव दुर्गा कहते हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—

१. शैल पुत्री	२. ब्रह्मचारिणी	३. चंद्रघण्टा
४. कूष्माण्डा	५. स्कंदमाता	६. कात्यायनी
७. कालरात्री	८. महागौरी	९. सिद्धिदात्री

इन सभी रूपों की झलक इस भेंट में देखिये—

● नवदुर्गा की भेंट ●

अहो मात जग तारन माया,
नौ दुर्गे ने रूप धारा कोई न्यारा न्यारा ॥

प्रथमे माता शैल पुत्री नाम धराये,
गिरि की पुत्री हो शंकर का ध्यान लगाये।
भई तपस्या पूर्ण मात ने बहुवर पाये,
शिव शंकर कैलाशपती को पति बनाये ॥

शिव को पति बनाय के जी, रचा ब्याह महाराज।
प्रथम शैल पुत्री भयी कीना ज़ग का काज ॥ मात०

द्वितीये अपना रूप ब्रह्म ने आप दिखाया,
सब जग में किया बास ज्योति भयी मोहन माया।
ज्वालामुखी पहाड़ आन एक स्थान बनवाया,
अग्नि रूप हो आय मातु ने खेल रचाया ॥

द्वितीये ब्रह्मचारिणी भयी जो सब जग किया प्रकाश।
सन्त जनों की करी पालना, दुष्टों कर नाश ॥ मात०

तृतीये ब्रह्मा विश्नू माई को शीश नवावें,
देवन के महादेव माई का ध्यान लगावें।
इन्द्रादिक सुर देव मात ने सब उपजाये,
अपना कार्य करो हम तुम्हें सुनाये ॥

तृतीये चन्द्रघण्टा भई जी, तुमरा घंटा शब्द सुनाय ।
तीन लोक तारन तरन मस्तक चन्द्र सुहाय ।। मात०

चार कर्म चार वर्ण मातु ने आप बनाये,
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र जिनके नाम धराये ।
तप करने को मात ब्राह्मण धर्म चलाये,
युद्ध विद्या के कारन क्षत्री परम्पराये ।

वैश्य उदर व्यापार को जी शूद्र को सेवा दीन ।
कुष्मांडाते चतुर्थकम् चौथा रूप धर लीन ।। मात०

पांचों देवता मात अपने लिए बुलाये ।
सकल जगत विख्यात मात की शरनी आये,
आज्ञा हमको देउ चरन पर शीश नवाये,
तुम तप करने को जाउ मातु ने वचन सुनाये ।।

तप करने को, चल दिये जी, ब्रह्मा विश्नू महेश ।
पंचम स्कन्द मातेति मैं सुमरूँ आदि गनेश ।। मात०

सब देवन के हेतु महा माई बन आई,
अंग ज्वालपा मातु ज्वाला को ज्योति सवाई ।
जल विच दर्शन दिया झलकती कला दिखाई,
देखरूप विकराल देवन मन धीरज आई ।।

सभी देव स्तुति करें जी, तुम सुनो गरीब निवाज ।
षष्टम कत्यायनी भई, राखी भक्त की लाज ।। मात०

सप्तम काली रूप कालिका काल बनाओ,
धर्मराज धरा नाम धर्म को वचन सुनाओ ।
असुर बिडारन कारण आप दीवान लगाओ,
अपनी भृकुटी खोल काल भैरों उपजाओ ।।

रत्नागिरि पर आय के जी, असुरन खेत बिछाय ।
सप्तम कालरात्रि का बना रूप न बरना जाय ।। मात०

सुर नर मुनि जन सकल देवता मंगल गावें,
अष्ठ पहर दिन रैन शेष तेरी स्तुति गावें ।
कर किरपा किरपाल भवानी सब जन ध्याये,

अष्ट भुजी सिंह वाहिनी जी दानू दल संहार।
महागौरी के भेष में लखियाँ रूप अपार ॥ मात०

नौवें दुर्गामात, मातु का ध्यान लगाये,
नौ नाथ चौरासी सिद्ध तेरे द्वारे आये।
नारद धरें ध्यान इन्दर तेरी आरति लाये,
पंडित आसन बैठ के चण्डी पाठ सुनाये ॥

नौंवे सिद्धिधात्रीतिया जो नव दुर्गा प्रकीर्तता।
जनानाथ शरनी पड़े, तुम हो मात पिता ॥ मात०

देवी के नौ अवतारों की कथा

श्री दुर्गा सप्तशती के ग्यारहवें अध्याय में देवी के नौ अवतारों की कथा मिलती है। स्वयं देवी द्वारा उच्चारण किये गए शब्दों में—

"......यदा-यदा दानवोत्था भविष्यति
तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम्"

—श्री दुर्गा सप्तशती

अर्थात् जब-जब भी दैत्यों द्वारा उपद्रव उठेगा, तब-तब मैं अवतार लेकर शत्रुओं (दैत्यों) का संहार करूँगी। भगवती ने इस कथन की पालना भिन्न-भिन्न दुष्कर समयों पर अवतार धारण करके तथा दुष्टों का नाश करके की है। देवी के नौ अवतारों की कथा निम्न प्रकार है—

१. **महाकाली**—एक बार जब पूरा संसार प्रलय से ग्रस्त हो गया था। चारों ओर पानी ही पानी दिखाई देता था। उस समय भगवान विष्णु की नाभि से एक कमल उत्पन्न हुआ। उस कमल से ब्रह्मा जी निकले। इसके अतिरिक्त भगवान नारायण के कानों में से कुछ मैल भी निकला, उस मैल से कैटभ और मधु नाम के दो दैत्य बन गये। जब उन दैत्यों ने चारों ओर देखा तो ब्रह्मा जी के अलावा उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं दिया। ब्रह्मा जी को देखकर वे दैत्य उनको मारने दौड़े। तब भयभीत हुए ब्रह्मा जी ने विष्णु भगवान की स्तुति की। स्तुति से विष्णु भगवान की आँखों में जो महामाया ब्रह्मा की योगनिद्रा के रूप में निवास करती थी वह लोप हो गई और विष्णु भगवान की नींद खुल गई। उनके जागते ही वे दोनों दैत्य भगवान विष्णु से लड़ने लगे। इस प्रकार पाँच हजार वर्ष तक युद्ध चलता रहा। अन्त में भगवान की रक्षा के लिए महामाया ने असुरों की बुद्धि को बदल दिया। तब वे असुर विष्णु भगवान से बोले—हम आपके युद्ध से प्रसन्न हैं जो चाहो वर माँग लो। भगवान ने मौका पाया और कहने लगे—यदि हमें वर देना है तो यह वर दो कि दैत्यों का नाश हो। दैत्यों ने कहा—ऐसा ही होगा। ऐसा कहते ही महाबली दैत्यों का नाश हो गया। जिसने असुरों की बुद्धि को बदला था वह 'महाकाली' थीं।

२. महालक्ष्मी—एक समय महिषासुर नाम का एक दैत्य हुआ। उसने समस्त राजाओं को हराकर पृथ्वी और पाताल पर अपना अधिकार जमा लिया। जब वह देवताओं से युद्ध करने लगा तो देवता भी उससे युद्ध में हारकर भागने लगे। भागते-भागते वे भगवान विष्णु के पास पहुँचे और उस दैत्य से बचने के लिए स्तुति करने लगे। देवताओं की स्तुति करने से भगवान विष्णु और शंकर जी जब प्रसन्न हुए, तब उनके शरीर से एक तेज निकला; जिसने महालक्ष्मी का रूप धारण कर लिया। इन्हीं महालक्ष्मी ने महिषासुर दैत्य को युद्ध में मारकर देवताओं का कष्ट दूर किया।

३. महासरस्वती—एक समय शुम्भ-निशुम्भ नाम के दो दैत्य बहुत बलशाली हुए थे। उनसे युद्ध में मनुष्य तो क्या देवता तक हार गये। जब देवताओं ने देखा कि अब युद्ध में नहीं जीत सकते, तब वह स्वर्ग छोड़कर भगवान विष्णु की स्तुति करने लगे। उस समय भगवान विष्णु के शरीर में से एक ज्योति प्रकट हुई जो कि महासरस्वती थी। महासरस्वती अत्यन्त रूपवान थीं। उनका रूप देखकर वे दैत्य मुग्ध हो गये और अपना सुग्रीव नाम का दूत उस देवी के पास अपनी इच्छा प्रकट करते हुए भेजा। उस दूत को देवी ने वापिस कर दिया। इसके बाद उन दोनों ने देवी को बलपूर्वक लाने के लिए अपने सेनापति धूम्राक्ष को सेना सहित भेजा, जो देवी द्वारा सेना सहित मार दिया गया। इसके बाद रक्तबीज लड़ने आया, जिसके रक्त की एक बूंद जमीन पर गिरने से एक वीर पैदा होता था। वह बहुत बलवान था। उसे भी देवी ने मार गिराया। अन्त में शुम्भ-निशुम्भ स्वयं दोनों लड़ने आये और देवी के हाथों मारे गये।

४. योगमाया—जब कंस ने वसुदेव-देवकी के छः पुत्रों का वध कर दिया था और सातवें गर्भ में शेषनाग बलराम जी आये, जो रोहिणी के गर्भ में प्रवेश होकर प्रकट हुए, तब आठवां जन्म कृष्ण जी का हुआ। साथ ही साथ गोकुल में यशोदा जी के गर्भ से योगमाया का जन्म हुआ जो वसुदेव जी के द्वारा कृष्ण के बदले मथुरा में लाई गई थी।

जब कंस ने कन्या-स्वरूपा उस योगमाया को मारने के लिए पटकना चाहा तो वह हाथ से छूट गई और आकाश में जाकर देवी का रूप धारण कर लिया। आगे चलकर इसी योगमाया ने कृष्ण के साथ योगविद्या और महाविद्या बनकर कंस, चाणूर आदि शक्तिशाली असुरों का संहार करवाया।

५. रक्त दन्तिका—एक बार वैप्रचित्ति नाम के असुर ने बहुत से कुकर्म करके पृथ्वी को व्याकुल कर दिया। उसने मनुष्य ही नहीं बल्कि देवताओं तक को बहुत दुःख दिया। देवताओं और पृथ्वी की प्रार्थना पर उस

समय देवी ने रक्त दन्तिका नाम से अवतार लिया और वैप्रचित्ति आदि असुरों का मानमर्दन कर डाला। भयंकर दैत्यों को भक्षण करते समय देवी के दाँत अनार के फूल के समान लाल हो गए। इसी कारण से इनका नाम रक्त-दन्तिका विख्यात हुआ।

६. **शाकम्भरी**—एक समय पृथ्वी पर लगातार सौ वर्ष तक पानी की वर्षा ही नहीं हुई। इस कारण चारों ओर हा-हाकार मच गया। सभी जीव भूख और प्यास से व्याकुल हो मरने लगे। उस समय मुनियों ने मिलकर देवी भगवती की उपासना की। तब जगदम्बा ने शाकम्भरी नाम से स्त्री रूप में अवतार लिया और उनकी कृपा से जल की वर्षा हुई जिससे पृथ्वी के समस्त जीवों को जीवनदान प्राप्त हुआ। वृष्टि न होने के पहले तक देवी ने प्राणों की रक्षा में समर्थ शाकों द्वारा सम्पूर्ण जगत का भरण-पोषण किया, जिससे 'शाकम्भरी' नाम प्रसिद्ध हुआ।

७. **श्री दुर्गा**—एक समय भारतवर्ष में दुर्गम नाम का राक्षस हुआ। उसके डर से पृथ्वी ही नहीं, स्वर्ग और पाताल में निवास करने वाले लोग भयभीत रहते थे। ऐसी विपत्ति के समय में भगवान की शक्ति ने दुर्गा या दुर्गसेनी के नाम से अवतार लिया और दुर्गम राक्षस को मारकर ब्राह्मणों और हरि भक्तों की रक्षा की। दुर्गम राक्षस को मारने के कारण ही तीनों लोकों में इनका नाम दुर्गा प्रसिद्ध हो गया।

८. **भ्रामरी**—एक बार महाअत्याचारी अरुण नाम का एक असुर पैदा हुआ। उसने स्वर्ग में जाकर उपद्रव करना शुरू कर दिया। देवताओं की पत्नियों का सतीत्व नष्ट करने की कुचेष्टा करने लगा। अपने सतीत्व की रक्षा के लिए देव-पत्नियों ने भौरों का रूप धारण कर लिया और दुर्गा देवी की प्रार्थना करने लगीं। देव-पत्नियों को दुःखी जानकर माता दुर्गा ने भ्रामरी का रूप धारण करके उस असुर को उसकी सेना सहित मार डाला और देव-पत्नियों के सतीत्व की रक्षा की।

९. **चण्डिका या चामुण्डा**—एक बार पृथ्वी पर चंड मुंड नाम के दो राक्षस पैदा हुए। वे दोनों इतने बलवान थे कि संसार में अपना राज्य फैला लिया और स्वर्ग के देवताओं को हराकर वहाँ भी अपना अधिकार जमा लिया। इस प्रकार देवता बहुत दुःखी हुए और देवी की स्तुति करने लगे। तब देवी चण्डिका के रूप में अवतरित हुई और चंड-मुंड नामक राक्षसों को मारकर संसार का दुःख दूर किया। देवताओं का गया स्वर्ग पुनः उन्हें दिया। इस प्रकार चारों ओर सुख का राज्य छा गया। चण्ड तथा मुण्ड का वध करने के कारण इस अवतार में देवी को चामुण्डा और चण्डी कहा गया।

शक्तिपीठों का इतिहास

व देवी मन्दिरों की स्थापना

भगवती सती (पार्वती) की कथा

एक समय महाव्रती राजा दक्ष ने देवी का तप किया। तीन हजार दिव्य वर्षों तक निरन्तर तप करने के बाद राजा को जगदम्बिका ने दर्शन दिए। वे कृतार्थ हो गये। राजा दक्ष ने देवी से पूछा कि भगवान शंकर ने रुद्र नाम से ब्रह्मा के पुत्र के रूप में अवतार लिया है और आपका अवतार अभी नहीं हुआ है तो शिवजी की पत्नी कौन होंगी ?

तब जगदम्बा ने उन्हें वर दे दिया कि मैं ही तुम्हारी स्त्री से पुत्री रूप में उत्पन्न होकर कठिन तप से शिव की पत्नी बनूँगी। शिवजी बिना कठिन तप के प्राप्त नहीं हो सकते।

कालान्तर से महामाया ने दक्ष-प्रजापति के घर जन्म लिया और सती नाम से वह माता-पिता के घर पलने लगी। जब सती बड़ी हो गई तो उसने शिवजी की प्राप्ति के लिए

दक्ष प्रजापति को जगदम्बा के दर्शन

माता से तप करने की आज्ञा माँगी। जब से वह तपस्या के लिए गई तब से उनका नाम उमा पड़ गया।

तप की समाप्ति पर भगवान शिव ने सती को दर्शन दिया और सती के आग्रह पर कैलाशवासी भूतभावन भगवान शंकर ने सती के पिता के घर जाकर विधिवत् रूप से सती को स्वीकार कर लिया।

एक समय देवसभा में दक्ष-प्रजापति के आगमन पर जब भगवान शंकर उठकर खड़े नहीं हुए तो महाराज दक्ष ने रुष्ट होकर कहा—सांसारिक सम्बन्ध में इसने मेरे पुत्र समान होते हुए भी मुझे प्रणाम नहीं किया, अतः हे देवताओ ! मैं इसे बहिष्कृत करता हूँ। आज से यह देवताओं के साथ भाग नहीं पायेगा। इसी बात को लेकर राजा दक्ष शिवजी के निन्दक हो गये।

× × ×

जब एक समय लीलाधारी शंकर सती के साथ नन्दीश्वर पर बैठे त्रिलोकी का भ्रमण कर रहे थे तो दण्डक वन में पहुँचने पर शंकर जी ने विरह से व्याकुल होकर घूमते रामचन्द्र जी को प्रणाम किया। इस सम्बन्ध में यह भी कहा जाता है कि एक बार शिव अखंड समाधि में लीन थे। दीर्घकाल के बाद जब उन्होंने समाधि खोली तो उनके मुख से 'राम' शब्द निकला।

भगवती सती ने उसे सुनकर शंकर जी से पूछा—हे स्वामी ! राम कौन है ? जिसका आप स्मरण करते हैं। तब शिवजी ने उत्तर दिया—हे प्रिये ! राम ही मेरे आराध्य देव हैं। वे साक्षात् परब्रह्म हैं वर्तमान में वह मानव शरीर धारण कर उत्पन्न हुए हैं और भूमण्डल पर लीला करते विचर रहे हैं। धर्म की स्थापना के लिए ही मेरे प्रभु ने यह अवतार लिया है। अतः मैं उन्हीं का स्मरण कर रहा हूँ।

यह सुनकर सती के मन में संदेह हुआ कि यदि राम पूर्ण ब्रह्म हैं तो वह सीता के विरह में व्याकुल होकर एक सामान्य मनुष्य का सा व्यवहार क्यों कर रहे हैं ? अन्तर्यामी भगवान शंकर ने जब यह जाना कि रामचन्द्र के पूर्ण ब्रह्म होने के बारे में सती के मन में शंका है तो उन्होंने सती से कहा—हे प्रिय, यदि तुम्हारे मन में किसी प्रकार का संदेह हो तो तुम स्वयं अपनी बुद्धि से परीक्षा ले सकती हो।

पति की स्वीकृति पाकर सती उस स्थान पर जा पहुँची जहाँ रामचन्द्र जी सीता के विरह में व्याकुल होकर भटक रहे थे। इस समय सती ने सीता जी का रूप धारण कर लिया था और सोचा कि यदि रामचंद्र उन्हें देखकर भ्रमित हो जायेंगे तो स्पष्ट हो जायेगा कि वे पूर्ण ब्रह्म नहीं हैं। परन्तु सती ने जो सोचा था उसका उल्टा हुआ। सीता का रूप धर

कर आती सती को देखकर भगवान राम ने उन्हें प्रणाम किया और कहा—'हे माता आप वन में क्यों विचरण कर रही हैं भगवान शंकर किधर हैं ?'

रामचन्द्र जी के मुख से 'माता' शब्द सुनकर सती अत्यन्त लज्जित हुई और इस स्वरूप को त्याग कर शंकर जी के पास लौट आई। शिवजी भी योग-दृष्टि से यह सब कुछ देख रहे थे। जब उन्होंने सती को मातृतुल्य सीता के रूप में देखा तो उसी समय से उन्होंने सती को पत्नी रूप में त्याग दिया। सती के मन में घोर पश्चाताप और दुःख हुआ लेकिन अब क्या हो सकता था ? शिव ने सती से कहा तो कुछ नहीं लेकिन धीरे-धीरे सती को भी पता लग गया कि भगवान ने उन्हें पत्नी रूप में त्याग दिया है। वह दुःखी रहने लगीं।

× × ×

इसी समय दक्ष प्रजापति ने कनखल नामक स्थान पर एक बड़े भारी यज्ञ का आयोजन किया। यज्ञ में भाग लेने के लिए उन्होंने सभी देवी-देवताओं को तो आमन्त्रित किया लेकिन पूर्व द्वेष के कारण शिव और सती को नहीं बुलाया।

राजाओं और देवताओं को विमानों में बैठकर पिता के यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए जाता देखकर सती ने भी अपने पति से चलने का आग्रह किया। शिवजी ने बिना निमन्त्रण के जाना उचित नहीं समझा। सती ने पुनः आग्रह किया कि पुत्री को पिता और गुरु के घर बिन बुलाये जाने में कोई दोष नहीं। अतः शिवजी ने सती को तो दक्ष के घर जाने की आज्ञा दे दी परन्तु स्वयं नहीं गये। सती अपने पिता के उत्सव में जाकर सम्मिलित तो हो गई लेकिन वहाँ उसका वैसा आदर नहीं हुआ जैसा कि अन्य निमन्त्रित अतिथियों का हो रहा था। भगवान शंकर जी की अर्धाङ्गिनी सती ने अपने पिता के यज्ञ में समस्त देवताओं के साथ पति को न बुलाये जाने पर उनका घोर अपमान समझा। वे निरादर को सहन न कर सकीं। मन ही मन वह पत्नी रूप में त्यागे जाने से भी दुखी थीं। वह यज्ञ के समक्ष खड़े होकर क्रोध में आकर कहने लगी—हे पिता ! मैंने तेरे शरीर से जन्म लिया और तूने मेरे पति का अपमान किया है इस कारण मैं तेरे से उत्पन्न इस शरीर को न रखूँगी। अन्ततः यज्ञ में अपने पति का भाग भी न देखकर तुरन्त ही देह त्याग देने का संकल्प कर उसी यज्ञ कुण्ड में गिरकर अपने प्राणों की आहुति दे दी। सती हवन कुण्ड में कूद पड़ी।

यज्ञ में हाहाकार मच गई !

सूचना महादेव जी को मिली !!

परिस्थिति को देखकर महादेव जी को रौद्र रूप धारण करना पड़ा। उन्होंने तुरन्त ही अपने गणों को आज्ञा दी कि यज्ञ को तहस-नहस कर दो।

इसी यज्ञ कुण्ड में सती ने अपने प्राणों की आहुति दे दी थी
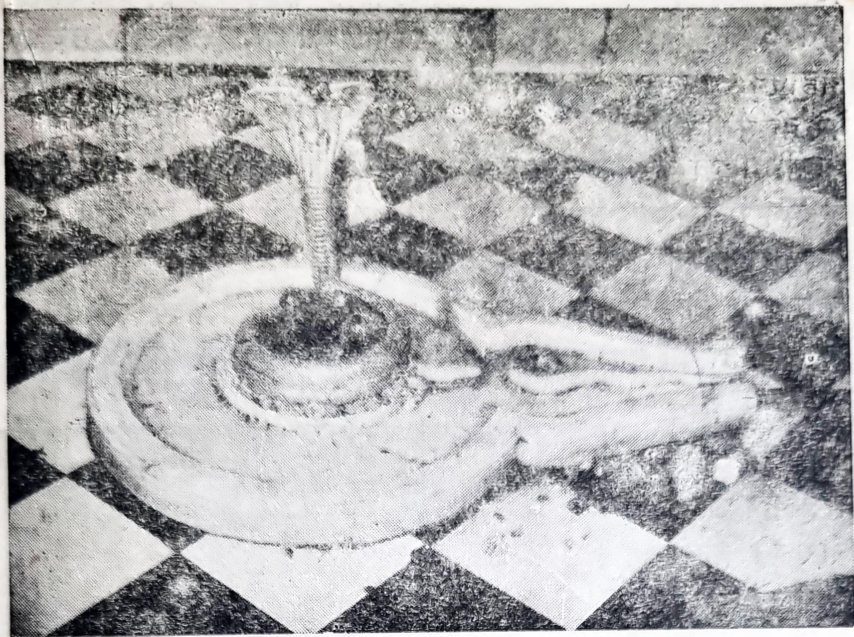
दक्ष का सिर काट-कर उसी हवन कुण्ड में फेंक दो जहाँ सती का शरीर गिरा है। गणों ने यज्ञ नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। दक्ष का सिर भी हवन की भेंट कर दिया गया। यह देखकर समस्त देवताओं ने महादेव जी से क्षमा माँगी और उनकी स्तुति की। फलस्वरूप महादेव जी को प्रसन्न कर लिया गया। सबके विचा-रानुसार यज्ञ तो पूर्ण होना ही

दक्ष के धड़ पर बकरे का सिर लगाना व दक्ष का भगवान शंकर की स्तुति करना

चाहिए था। दक्ष के धड़ के साथ बकरे का सिर जोड़कर उन्हें जीवित किया गया। तत्पश्चात् दक्ष ने बकरे की भाषा में बम् बम् शब्द का उच्चारण करके महादेव की स्तुति की। शिवजी प्रसन्न हुए और वर दिया कि तेरी भी पूजा मेरे ही समान होगी।

इसी घटना के फलस्वरूप हरिद्वार से ४ किलोमीटर पर कनखल नामक स्थान में दक्षेश्वर महादेव का मन्दिर बना है। यूँ तो वर्ष भर ही श्रद्धालु दर्शनों को जाते हैं परन्तु सावन में विशेष पूजा होती है। सावन के प्रत्येक सोमवार को यहाँ मेला लगता है। मन्दिर काफी भव्य बन गया है। दर्शन करने वालों की मनोकामना पूर्ण होती है।

इसके बाद शिव जी सती के विरह से व्याकुल होकर उसके मृत शरीर को हाथों पर लिए तीनों लोकों में घूमने लगे। इस स्थिति को देखकर भगवान विष्णु ने चक्र से सती के मृत शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके गिरा दिए। सती की देह के अंग ५१ विभिन्न स्थानों पर गिरे। इन सभी स्थानों को शक्तिपीठ माना जाता है।

शिवजी का व्यामोहवश भ्रमण

पति के अपमान से दुखी हो अपना शरीर त्याग करने के बाद फिर से उन्हीं महादेव से विवाह करने के अभिप्राय से उन्होंने हिमाचल के घर में जन्म लिया। अब सती की माता का नाम मेनका था। मेनका सद्गुणी और अत्याधिक रूपवान थीं। माता के समान ही शरीर का वर्ण उज्जवल होने से उन्हें 'गौरी' तथा पर्वतराज की कन्या होने के कारण पार्वती कहते थे। आज भी वह जगतजननी आदिशक्ति और सर्वव्यापिनी के रूप में भारतवर्ष में पूजी जाती हैं।

इसी घटना को अमर बनाये रखने के लिए कनखल में दक्षेश्वर महादेव का प्राचीन भव्य मन्दिर नगर की श्री वृद्धि कर रहा है। जिसके दर्शनार्थ भारत के कोने-कोने से यात्री आते हैं। प्रति वर्ष श्रावण मास में प्रति सोमवार को इस मन्दिर के प्रांगण में बड़ा मेला लगता है।

दक्षेश्वर मन्दिर—

इसी स्थान पर सती ने यज्ञ कुण्ड में अपने प्राणों की आहुति दे दी

दक्षेश्वर मन्दिर। (कनखल)

वर्तमान युग में जिन नौ देवियों की अत्यधिक प्रसिद्धि है और जिनके मंदिर भारत वर्ष में विभिन्न स्थानों पर हैं, जहाँ लाखों यात्री वर्ष-प्रतिवर्ष जाकर अपनी भक्ति-भावना का परिचय देते हैं उन नौ देवियों के नाम इस प्रकार हैं—

१. श्री नैना देवी
२. श्री चिन्तापुर्णी देवी
३. श्री ज्वालामुखी
४. श्री वज्रेश्वरी देवी (नगरकोट-कांगड़ा)
५. माता वैष्णो देवी
६. श्री चामुण्डा देवी
७. श्री मनसा देवी
८. श्री शाकुम्भरी देवी
९. श्री कालिका जी

शिव पुराण की कथानुसार सती पार्वती के शव को लेकर जब भगवान् शिव तीनों लोकों का भ्रमण कर रहे थे तो भगवान् विष्णु ने उनका मोह दूर करने के लिए सती के शव को चक्र से काट-काट कर गिरा दिया था। जिन-जिन स्थानों पर अंग गिरे वहां शक्ति पीठ माने गए। कुल ५१ शक्ति पीठों में इन नौ देवियों के मन्दिरों की भी गणना है।

नौ देवियों की कथा

माँ के विविध रूपों का नामकरण

तैंने रूप अनेकों धारे, ऊँचे-ऊँचे पर्वत वाली ए।
लागें एक-एक से न्यारे, सुनले मेरी लाटों वाली ए।
आत्मदाह शिव सुना सती का, भये क्रोध में आँधे,
झुलसा हुआ शरीर सती का लटकाया निज कांधे।
फिरते पर्वत-पर्वत मारे ॥ ऊँचे-२
हाहाकार मचा त्रैलोकी, लगें देव थर्राने,
विष्णु ने सृष्टि रक्षा हित धनुष बाण संधाने ॥
सती के काट अंग भू डारे ॥ ऊँचे-२
केश गिरे कलकत्ते जा कर बनी कालिका काली,
नीलाचल आसाम गिरा कुख, भई कुमख्या वाली।
तेरे होवें जय-जय कारे ॥ ऊँचे-२
शीश गिरा शिवलोका पर्वत शाकुम्भरा बन आई,
हाथ गिरा ढिग जाय करांची हिंगलाज कहलाई ॥
सुर नर मुनी जन नाम उचारे ॥ ऊँचे-२
मस्तक गिरा पास चंडीगढ़, मनसादेवी नाम पड़ा,
नंगल पर्वत नयन गिरे तहां नैना देवी नाम चला।
टेढ़े मेढ़े तेरे द्वारे ॥ उँचे-२
चरण गिरे नियरे भरबाई चितपूरनी माई,
ज्वाला जी पर्वत पर जिह्वा, ज्वालामुखी कहलाई।
दीखें लपटों के नजारे ॥ ऊँचे-२
स्तन गिरे कांगड़ा जाकर वृजेश्वरी बन आई,
त्रिकूटमणी पर्वत पै बाजू, वैश्नों देवी कहाई।
'भक्तों' आन पड़ा तेरे द्वारे ॥ ऊँचे-२

शिवालिक पर्वत के शिखर पर नैना देवी का भव्य-मन्दिर

नैना देवी

इस स्थान पर सती के दोनों नेत्र गिरे थे। नैना देवी की गणना प्रमुख शक्तिपीठों में होती है। हिमाचल प्रदेश में स्थित यह स्थान पंजाब की सीमा के काफी समीप है। मन्दिर में भगवती नैना देवी के दर्शन पिन्डी रूप में होते हैं। श्रावण मास की अष्टमी तथा नवरात्रों में यात्रा बहुत अधिक संख्या में होती है, अन्य दिनों यहाँ अपेक्षाकृत कम यात्री जाते हैं।

मार्ग परिचय—उत्तरी भारत के पंजाब राज्य में भाखड़ा-नंगल लाईन पर आनन्दपुर साहिब प्रसिद्ध स्टेशन है। इस स्थान से उत्तर दिशा की ओर शिवालिक पर्वत के शिखर पर नैना देवी का भव्य-मन्दिर बना है। नैना देवी के लिए नंगल से बस-सेवा उपलब्ध होती है। लगभग तीन घण्टे में यात्री बस द्वारा नंगल से नैना देवी पहुँच जाते हैं। बस स्टैण्ड से नैनादेवी के मन्दिर पहुँचने के लिए लगभग दो किलोमीटर पहाड़ी मार्ग पैदल चढ़ना होता है, जिसे साधारणतया यात्री लगभग आधे घण्टे में सुविधा से पूरा कर लेते हैं। इस मन्दिर के निर्माण तथा उत्पत्ति के विषय में कई दन्त कथाएं प्रचलित हैं, परन्तु निम्नलिखित कथा प्रामाणिक समझी जाती है।

कलियुग में प्रकट होने की कथा

इस पहाड़ी के समीप के इलाके में कुछ गूजरों की आबादी रहती थी। उसमें नैना नाम का गूजर देवी का परम भक्त था। वह अपने गाय, भैंस आदि पशुओं को चराने के लिए इस पहाड़ी पर आया करता था। इस पर जो पीपल का वृक्ष अब भी विराजमान है उसके नीचे आकर नैना गूजर की एक अनब्याही गाय खड़ी हो जाती और उसके स्तनों से अपने

आप दूध निकल पड़ता। नैना गूजर ने यह दृश्य कई बार देखा। वह यह देखकर सोच-विचार में डूब जाया करता था कि आखिर एक अनसुई गाय के थनों में इस पीपल के पेड़ के नीचे आकर दूध क्यों आ जाता है? अन्ततः एक बार उसने उस पीपल के पेड़ के नीचे जाकर जहाँ गाय का दूध गिरता था वहाँ पड़े हुए सूखे पत्तों के ढेर को हटाना आरम्भ कर दिया। पत्ते हटाने के बाद उसमें दबी हुई पिण्डी के रूप में मां भगवती की प्रतिमा दिखाई दी। नैना गूजर ने जिस दिन पिण्डी के दर्शन किए, उसी रात को माता ने स्वप्न में उसे दर्शन दिए और कहा कि मैं आदिशक्ति दुर्गा हूँ, तू इसी पीपल के नीचे मेरा स्थान बनवा दे। मैं तेरे ही नाम से प्रसिद्ध हो जाऊँगी। नैना माँ भगवती का परम भक्त था। उसने प्रातःकाल उठते ही देवी मां की आज्ञानुसार उसी दिन से मन्दिर की नींव रख दी। शीघ्र ही इस स्थान की महिमा चारों तरफ फैल गई, श्रद्धालु-भक्त दूर-दूर से आने लगे। उनकी मनोकामनाएँ पूरी होती रहीं। देवी के भक्तों ने भगवती का सुन्दर, भव्य तथा विशाल मन्दिर बनवा दिया और तीर्थ नैनादेवी नाम से प्रसिद्ध हो गया। मन्दिर के समीप ही एक गुफा है, जिसे नैना देवी की गुफा कहते हैं, इसके दर्शनार्थ भी कई भक्त जाते हैं।

नैना देवी

तेरा अद्‌भुत रूप निराला, आजा मेरी नैना माई ए।
तुझ पै तन मन धन सब वारूं आजा मेरी नैना माई ए॥

सुन्दर भवन बनाया तेरा, तेरी शोभा न्यारी,
नीके-नीके खम्बे लागे, अद्‌भुत चित्तर कारी।
तेरा रंग बिरंगा द्वारा॥ आजा०

झांझा और मिरदंगा बाजे और बाजे शहनाई,
तुरई नगाड़ा ढोलक बाजे, तबला शब्द सुनाई।
तेरे द्वार पै नौबत बाजे। आजा०

पीला चोला जरद किनारी लाल ध्वजा फहराये,
सिर लालों दा मुकुट विराजे निमाह नहिं ठहराये।
तेरा रूप न व्‌रना जाये॥ आजा०

पान सुपारी ध्वजा, नारियल भेंट तिहारी लागे,
बालक बूढ़े नर नारी की भीड़ खड़ी तेरे आगे।
तेरी जय जय कार मनावे॥ आजा०

कोई गाये कोई बजाये कोई ध्यान लगाये,
कोई बैठा तेरे आंगन नाम की टेर सुनाये।
कोई नृत्य करे तेरे आगे॥ आजा०

कोई मांगे बेटा बेटी किसी को कंचन माया,
कोई मांगे जीवन साथी, कोई सुन्दर काया।
'भक्तों' किरपा तेरी मांगे॥ आजा०

चिन्तपुर्णी

यह छिन्नमस्तिका देवी का स्थान है। इसे चिन्तापूर्णी—अर्थात् चिन्ता को पूर्ण करने वाली देवी माना जाता है। ऐसा कहा जाता है कि इस स्थान पर सती के चरणों के कुछ अंश गिरे थे।

यह स्थान हिमाचल-राज्य के जिला ऊना में है। होशियारपुर (पंजाब) से कुछ दूरी पर भरवाई नामक स्थान है। यहाँ बसों का आवागमन रहता है। भरवाई बस अड्डे से केवल २-३ मील की दूरी पर चिन्तपूरणी देवी का मन्दिर है। नैनादेवी से चिन्तपुरणी तक सीधी बस सेवा भी उपलब्ध है, लगभग ६-७ घण्टे का मार्ग है।
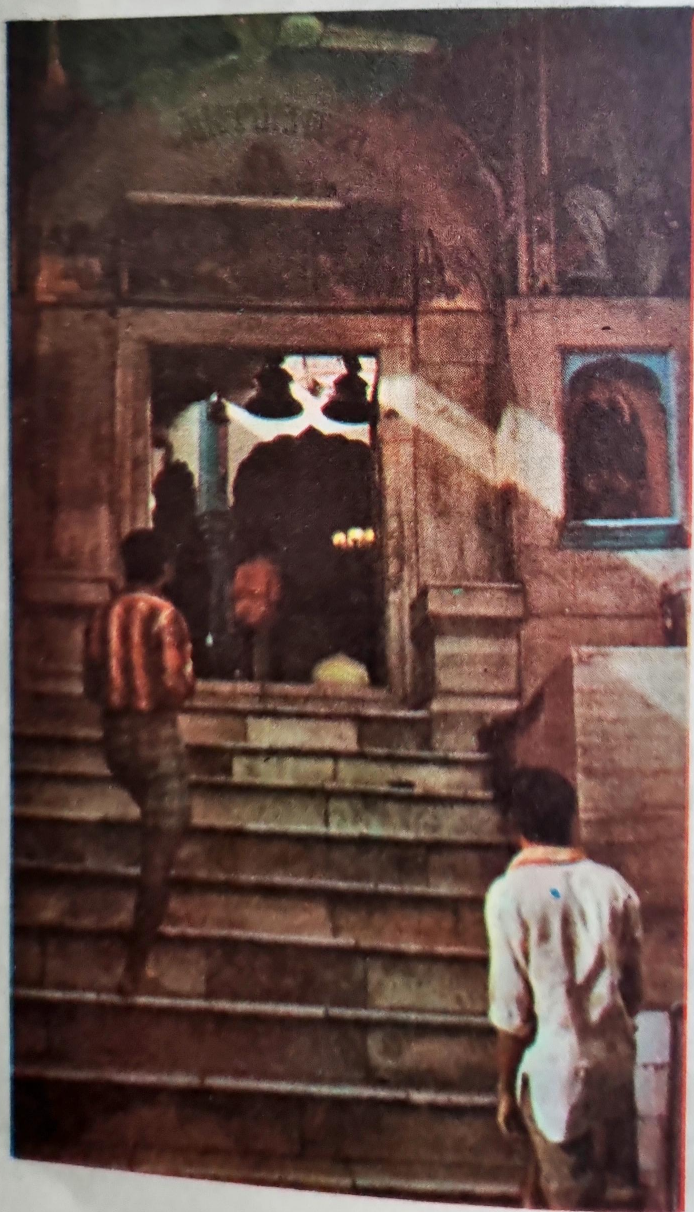
चिन्तपूर्णी मन्दिर का प्रवेश द्वार— यहाँ चैत तथा असौज माह के नवरात्रों में और श्रावण में दुर्गाष्टमी को भारी मेले भरते हैं, इन दिनों लाखों की संख्या में यात्री दर्शन करके चित्त की इच्छा पूर्ण करते हैं।

चिन्तपुर्णी देवी के साक्षात दर्शन

चिन्तापुर्णी का इतिहास

(भक्त माईदास की कथा)

कहा जाता है कि माईदास नामक दुर्गा-माता के एक श्रद्धालु भक्त ने इस स्थान की खोज की थी। दन्त-कथा के अनुसार माईदास के पिता अठूर नामी गाँव (रियासत पटियाला) के निवासी थे। उनके तीन पुत्र थे—

चिन्तपुर्णी

चिंतपुरनी, चिन्ता दूर करनी, जन को तारो भोली मां।

काली दा पुत्र पवन दा घोड़ा,
सिह पर भई असवार, भोली मां ॥ चिंतपुरनी

एक हाथ खड़ग दूजे में खांड़ा,
तीजे त्रिशूल सम्हालो, भोली मां ॥ चिंतपुरनी

चौथे हथ चक्कर गदा पांचवे,
छठे मुण्डों दी माल, भोली मां ॥ चिंतपुरनी

सतवें से रुण्ड मुण्ड बिदारे,
अठवें से असुर संहारे, भोली मां ॥ चिंतपुरनी

चम्पे का बाग लगा अति सुन्दर,
बैठी दीवान लगाय, भोली मां ॥ चिंतपुरनी

हरि हर ब्रह्मा तेरे भवन विराजे,
लाल चंदोया बैठी तान, भोली मां ॥ चिंतपुरनी

औखी घाटी विकटा पैंडा,
तले बहे दरिया, भोली मां ॥ चिंतपुरनी

सुमर चरन ध्यानू जस गावे,
भक्तां दी पैज निभाओ, भोली मां ॥ चिंतपुरनी

दवादास, दुर्गादास व सबसे छोटे माईदास। अपने पिता की भाँति ही माईदास का अधिकतर समय देवी के पूजा-पाठ में व्यतीत होता था। इस कारण वह अपने बड़े दो भाईयों के साथ व्यापार आदि काम काज में पूरा समय न दे पाते थे। इसी बात को लेकर उनके भाईयों ने उन्हें घर से अलग कर दिया। परन्तु माईदास ने फिर भी अपनी भक्ति व दिनचर्या में कोई कमी न आने दी। एक बार अपनी ससुराल जाते समय माई दास जी मार्ग में घने जंगल में वट-वृक्ष के नीचे आराम करने बैठ गए। (इस स्थान का प्राचीन नाम छपरोह था और आजकल उसी वट वृक्ष के नीचे चिन्तपुरणी मन्दिर बना हुआ है) संयोगवश माईदास जी की आँख लग गई तथा स्वप्न में उन्हें दिव्य-तेज से युक्त एक कन्या दिखाई दी, जिसने उन्हें आदेश दिया कि तुम इसी स्थान पर रहकर मेरी सेवा करो, इसी में तुम्हारा भला है। तन्द्रा टूटने पर वह फिर ससुराल की ओर चल दिए, परन्तु उनके मस्तिष्क में बार-२ यह ध्वनि गूंजती रही—'इस स्थान पर रहकर मेरी सेवा करो, इसी में तुम्हारा भला है।' ससुराल से वापिस आते समय माईदास के कदम फिर यहाँ ठिठक गए। घबराहट में वह फिर उसी वट-वृक्ष की छाया में बैठ गए और भगवती की स्तुति करने लगे। उन्होंने मन ही मन प्रार्थना की—हे माता! यदि मैंने शुद्ध हृदय से आप की उपासना की है तो प्रत्यक्ष दर्शन देकर मुझे आदेश दें, जिससे मेरा संशय दूर हो। बार-बार स्तुति करने पर उन्हें सिंह वाहिनी दुर्गा के चतुर्भुजी रूप में साक्षात् दर्शन हुए। देवी ने कहा कि मैं इस वृक्ष के नीचे चिरकाल से विराजमान हूं। लोग यवनों के आक्रमण तथा अत्याचारों के कारण मुझे भूल गए हैं। मैं इस वृक्ष के नीचे पिण्डी-रूप में स्थित हूँ। तुम मेरे परम-भक्त हो, अतः यहाँ रहकर मेरी आराधना और सेवा करो। मैं छिन्नमस्तिका के नाम से पुकारी जाती हूँ। तुम्हारी चिन्ता दूर करने के कारण अब मैं यहाँ चिन्तपुरणी नाम से प्रसिद्ध हो जाऊँगी। माईदास जी ने नतमस्तक होकर निवेदन किया—हे जगजननी! भगवती! मैं अल्प बुद्धि व अशक्त जीव हूँ। इस भयानक जंगल में अकेला किस प्रकार रहूँगा? न यहाँ पानी, न रोटी, न ही कोई स्थान बना है। यहाँ तो दिन में ही डर लगता है, रात्रि कैसे कटेगी? माता ने कहा कि मैं तुमको निर्भय-दान देती हूँ, इस मन्त्र का जप करो जिससे तुम्हारा भय दूर होगा—नमस्कार मंत्र—'ओं ऐं क्लीं ह्रीं श्री भयनाशिनी हूँ हूँ फट् स्वाहा' मूल मंत्र 'ओं ऐं क्लीं ह्रीं चामुण्डायै विच्चै' द्वारा तुम मेरी पूजा करो। नीचे जाकर तुम किसी बड़े पत्थर को उखाड़ो, वहाँ जल मिलेगा, उसी से तुम मेरी पूजा किया करना। जिन भक्तों की मैं चिन्ता दूर करूँगी, वह स्वयं ही मेरा मन्दिर बनवा देंगे। जो चढ़ावा चढ़ेगा उससे तुम्हारा गुजारा हो जाएगा। सूतक-पातक का विचार न करना, मेरी पूजा का अधिकार तुम्हारे

वंश को ही होगा। ऐसा कहकर माता पिण्डी के रूप में लोप हो गई।

भक्त-माईदास की चिन्ता का निवारण हुआ। वह प्रफुल्लचित्त पहाड़ी से थोड़ा नीचे उतरे और एक बड़ा पत्थर हटाया तो काफी मात्रा में जल निकल आया। माईदास की खुशी की सीमा न रही। उन्होंने वहीं अपनी झोंपड़ी बना ली और उसी जल से नित्य नियमपूर्वक पिण्डी की पूजा करनी प्रारम्भ कर दी। आज भी वह बड़ा पत्थर, जिसे माईदास जी ने उखाड़ा था, चिन्तपुरणी-मन्दिर में रखा हुआ है। जिस स्थान से जल निकला था, वहाँ अब सुन्दर तालाब बनवा दिया गया है। इस स्थान से जल लाकर माता का अभिषेक किया जाता है।
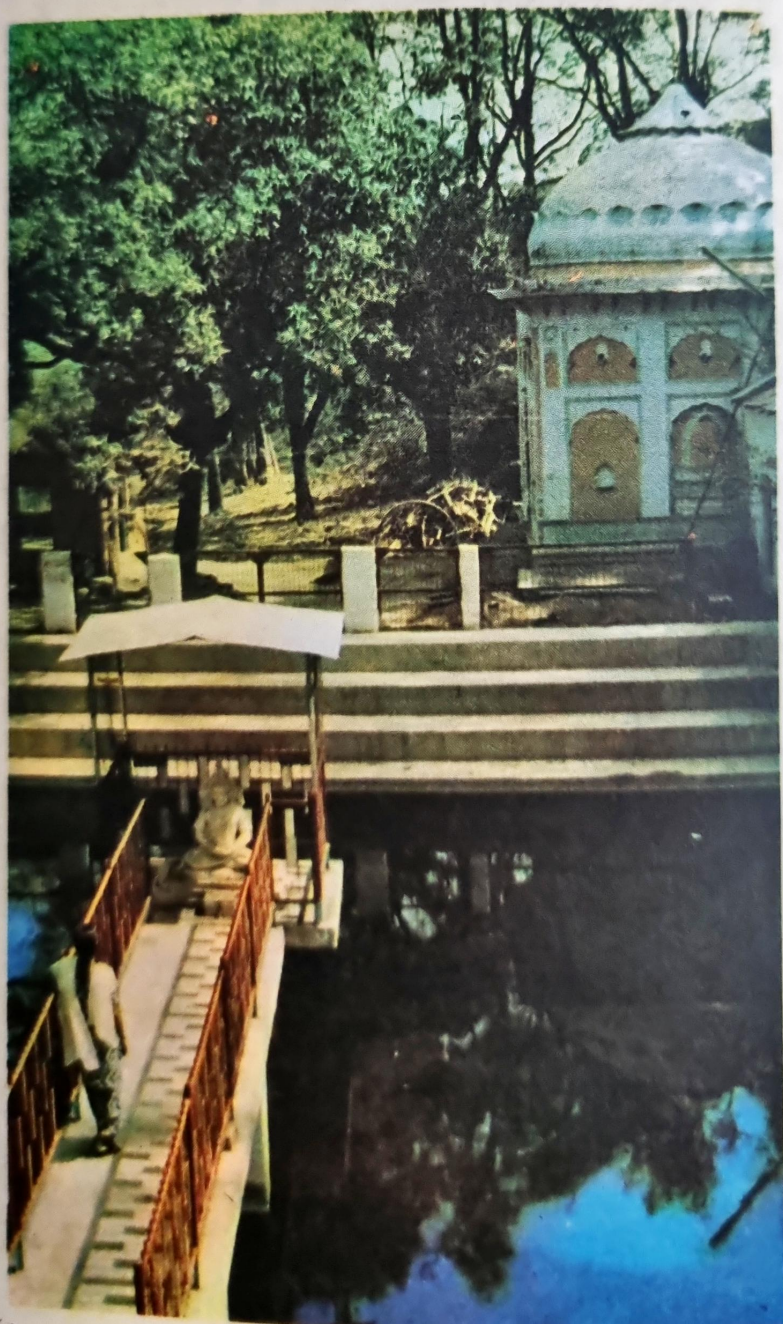
चिन्तपुर्णी का तालाब—इसी स्थान से भक्त माईदास जी ने पत्थर उखाड़ा तो जल प्रकट हो गया। मुख्य मन्दिर से लगभग २०० सीढ़ियां उतर कर यह स्थान है।

वज्रेश्वरी देवी
(नगरकोट-कांगड़ेवाली)

यह स्थान जन-साधारण में नगर कोट-कांगड़े वाली देवी के नाम से विख्यात है। यहाँ दर्शन किए बिना यात्रा सफल नहीं मानी जाती है। यवनों के अनेकानेक आक्रमण होते रहे, फिर भी यह स्थान वज्रेश्वरी देवी के प्रताप से अक्षत् रहा। कांगड़ा में सती के वक्षस्थल (स्तन) गिरे थे।

मार्ग-परिचय—ज्वालामुखी से लगभग ३० किलोमीटर की दूरी पर बसा हुआ हिमाचल-राज्य का प्रमुख नगर कांगड़ा, केवल २ घण्टे का बस-मार्ग है। यहाँ से हिमाचल-प्रदेश के सभी स्थानों के लिए बसें सुविधा से मिलती हैं। पठानकोट से जाने वाले यात्री लगभग ३ घण्टे में काँगड़ा पहुँच जाते हैं।

मन्दिर की कथा (इतिहास)

'जलन्धर-महात्म्य' से

राजा सुशर्मा के नाम पर रखा गया 'सुशर्मापुर', नगर कांगड़ा का अति प्राचीन नाम है, जिसका उल्लेख महाभारत में भी मिलता है। महमूद गजनवी के आक्रमण के समय इसका नाम 'नगरकोट' था। 'कोट' का अर्थ है किला—अर्थात् वह नगर जहाँ किला है—नगरकोट हुआ। 'त्रिगर्त-प्रदेश' कांगड़ा का महाभारत-कालीन नाम है। कांगड़ा के शाब्दिक अर्थ हैं—कान+गढ़ अर्थात् कान पर बना हुआ किला। पौराणिक कथानुसार यह कान जलन्धर दैत्य का है। कथा इस प्रकार है—जलन्धर नामक दैत्य का कई वर्षों तक देवताओं से घोर युद्ध हुआ। 'जलन्धर-महात्म्य' में लिखे अनुसार ही जब विष्णु भगवान और शंकर जी कपटी माया से परास्त जलन्धर दैत्य युद्ध में जर्जरित होकर मरणासन्न हो गया तो दोनों देवताओं ने, उसकी साध्वी-पत्नी सती-वृन्दा के शाप के भय से, जलन्धर को प्रत्यक्ष दर्शन देकर मन चाहा वर माँगने को कहा। सती वृन्दा (तुलसी) के आराध्य पति-परमेश्वर जलन्धर ने दोनों देवताओं की स्तुति करके कहा कि—हे सर्वशक्तिमान् प्रभो! यद्यपि आपने मुझे कपटी-माया रचकर मारा है, इस पर भी मैं अति-प्रसन्न हूँ। आपके प्रत्यक्ष दर्शन से मुझ जैसे तामसी और अहंकारी दैत्य का उद्धार हो गया। मुझे कृपया यह वरदान दें कि मेरा यह पार्थिव शरीर जहाँ-जहाँ तक फैला है उतने परिमाण योजन में सभी देवी-देवताओं और तीर्थों का निवास रहे। आपके श्रद्धालु एवं भक्त मेरे शरीर पर स्थित इन तीर्थों में स्नान-ध्यान-दर्शन-पूजन-दान-श्राद्धादि करके पुण्यलाभ प्राप्त करें। इसके पश्चात् जलन्धर ने वीरासन में स्थित होकर प्राण त्याग दिए। इसी कथा के अनुसार शिवालिक पहाड़ियों के बीच १२ योजन के क्षेत्र में जलन्धर पीठ फैला हुआ है जिसकी परिक्रमा में ६४ तीर्थ व मन्दिर पाये जाते हैं। इनकी प्रदक्षिणा का फल चार-धाम की यात्रा से कम नहीं है।

वज्रेश्वरी देवी

कोट कांगड़े वाली मैया की भेंट

किला कांगड़ा तेरा मां,
आन मुगल ने घेरा मां ।। किला०

नगर कोट की आदि भवानी ।
मुगल तुरक ने नाहीं मानी ।
तवे जड़ाये नहर मँगाई ।
लाया भवन पे डेरा मां ।। किला०
तवे फोड़ भईयां परचण्डी,
मुगलां भाग गये पगडण्डी ।
फूंक दिया सब डेरा मां,
किला कांगड़ा तेरा मां ।। किला०

भागे मुगल आये शरनाई,
भरम भुलाना बखशो माई ।
फेर ना पावां फेरा मां,
किला कांगड़ा तेरा मां ।। किला०

झूले झण्डे लाल निशाने,
माता पहने कुसुमड़े बाने ।
ध्यानू चाकर तेरा मां,
किला कांगड़ा तेरा माँ ।। किला०
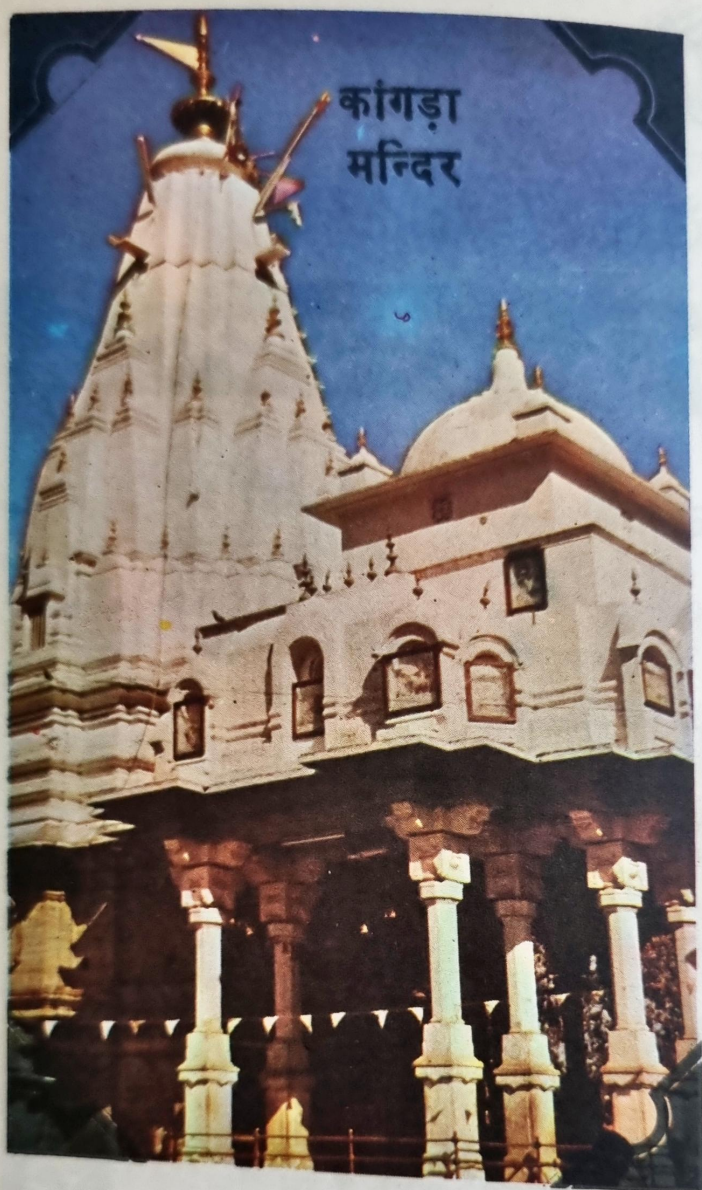
मन्दिर के दर्शन—राज्य के सर्वाधिक भव्य मन्दिर के सुनहरी कलश दूर-दूर तक दृष्टिगोचर होते हैं। मन्दिर के विशाल प्राङ्गण में महावीर, भैरों, शिवजी की सुन्दर मूर्तियों के अतिरिक्त ध्यानू भक्त तथा देवी की प्रतिमाएँ कलात्मक दृष्टि से प्रशंसनीय हैं। मन्दिर के परकोटे में तारादेवी का छोटा मन्दिर है, जो भूचाल आने पर भी नहीं गिरा था। माता के इस चमत्कार से इस स्थान की महत्ता और अधिक बढ़ गई है।

ज्वाला जी

यह धूमा-देवी का स्थान है। इसकी मान्यता ५१ शक्तिपीठों में सर्वोपरि है। कहा जाता है कि यहाँ पर भगवती सती की महाजिह्वा गिरी तथा भगवान् शिव उन्मत्त भैरव रूप से स्थित हैं। इस तीर्थ में देवी के दर्शन 'ज्योति' के रूप में किए जाते हैं। पर्वत की चट्टान से ९ विभिन्न स्थानों पर यह ज्योति बिना किसी ईंधन के स्वतः प्रज्जवलित होती है। इसी कारण देवी को 'ज्वाला जी' के नाम से पुकारा जाता है और यह स्थान ज्वालामुखी नाम से प्रसिद्ध हुआ।
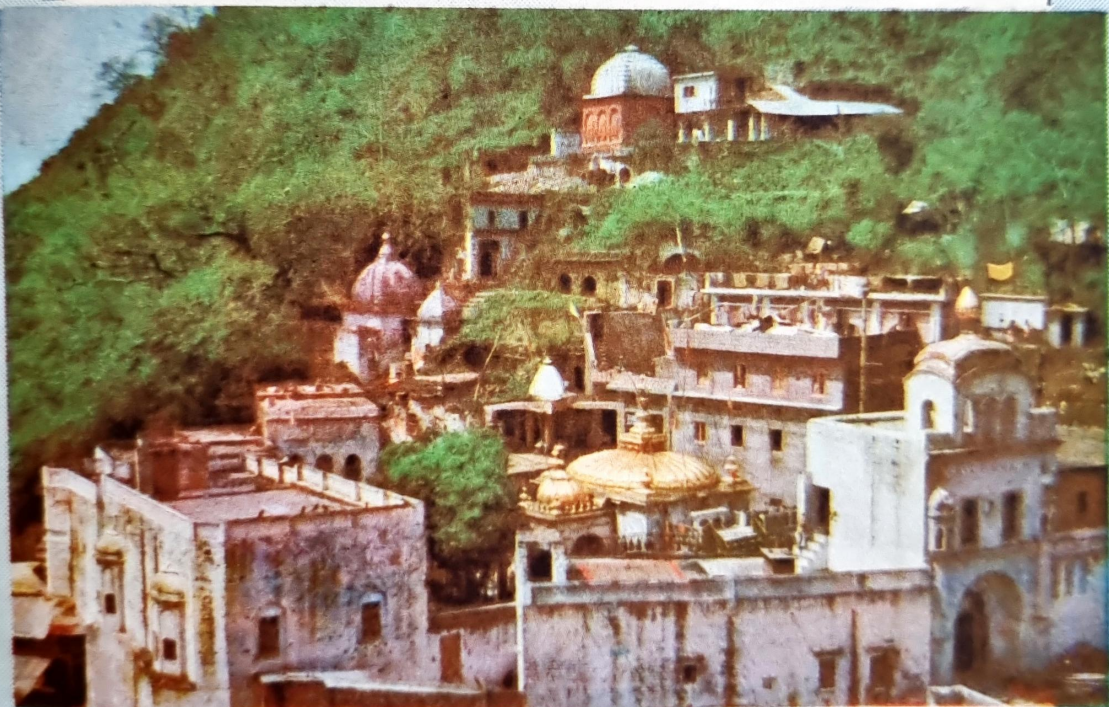
ज्वालामुखी का विहंगम दृश्य

मार्ग-परिचय—यह स्थान हिमाचल-प्रदेश के जिला काँगड़ा में स्थित है। पंजाब राज्य में जिला होशियारपुर के गोपीपुरा डेरा नामक स्थान से से लगभग २० किलोमीटर की दूरी पर ज्वाला जी का मन्दिर है। पठान कोट से काँगड़ा होते हुए भी यात्री ज्वालामुखी पहुंच सकते हैं। काँगड़ा से ज्वालामुखी लगभग २ घण्टे का बस-मार्ग है, हर आधे घंटे बाद बस चलती है।

श्री ज्वालामुखी मन्दिर का इतिहास

(सम्राट् भूमिचन्द्र की कथा)

श्री ज्वालामुखी मन्दिर के निर्माण के विषय में एक दन्त-कथा प्रचलित है, जिसके अनुसार सतियुग में सम्राट् भूमिचन्द्र ने ऐसा अनुमान किया कि भगवती सती की जिह्वा भगवान विष्णु के धनुष से कट कर हिमालय के धौलीधार पर्वतों पर गिरी है। काफी प्रयत्न करने पर भी वह उस स्थान को ढूंढने में असफल रहे। तदोपरान्त उन्होंने नगरकोट-कांगड़ा में एक छोटा सा मन्दिर भगवती सती के नाम से बनवाया। इसके कुछ वर्षों बाद किसी ग्वाले ने सम्राट् भूमिचन्द्र को सूचना दी कि उसने अमुक पर्वत पर ज्वाला निकलती हुई देखी है, जो ज्योति के समान निरन्तर जलती

है। महाराज भूमिचन्द्र जी ने स्वयं आकर इस स्थान के दर्शन किए और घोर वन में मन्दिर का निर्माण किया। मन्दिर में पूजा के लिए शाक-द्वीप से भोजक जाति के दो पवित्र ब्राह्मणों को लाकर यहाँ का पूजन-अधिकार सौंपा गया। इनके नाम पं० श्रीधर तथा और पं० कमलापति थे। उन्हीं भोजक ब्राह्मणों के वंशज आज तक श्री ज्वाला देवी की पूजा करते आ रहे हैं। महाभारत के एक प्रसङ्ग के अनुसार पंच-पांडवों (युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल सहदेव) ने ज्वालामुखी की यात्रा की तथा मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया। इसी आधार पर निम्न भेंट गाई जाती है—

"पंजा-२ पांडवां तेरा भवन बनाया अर्जुन ने चंवर डुलाया ...."
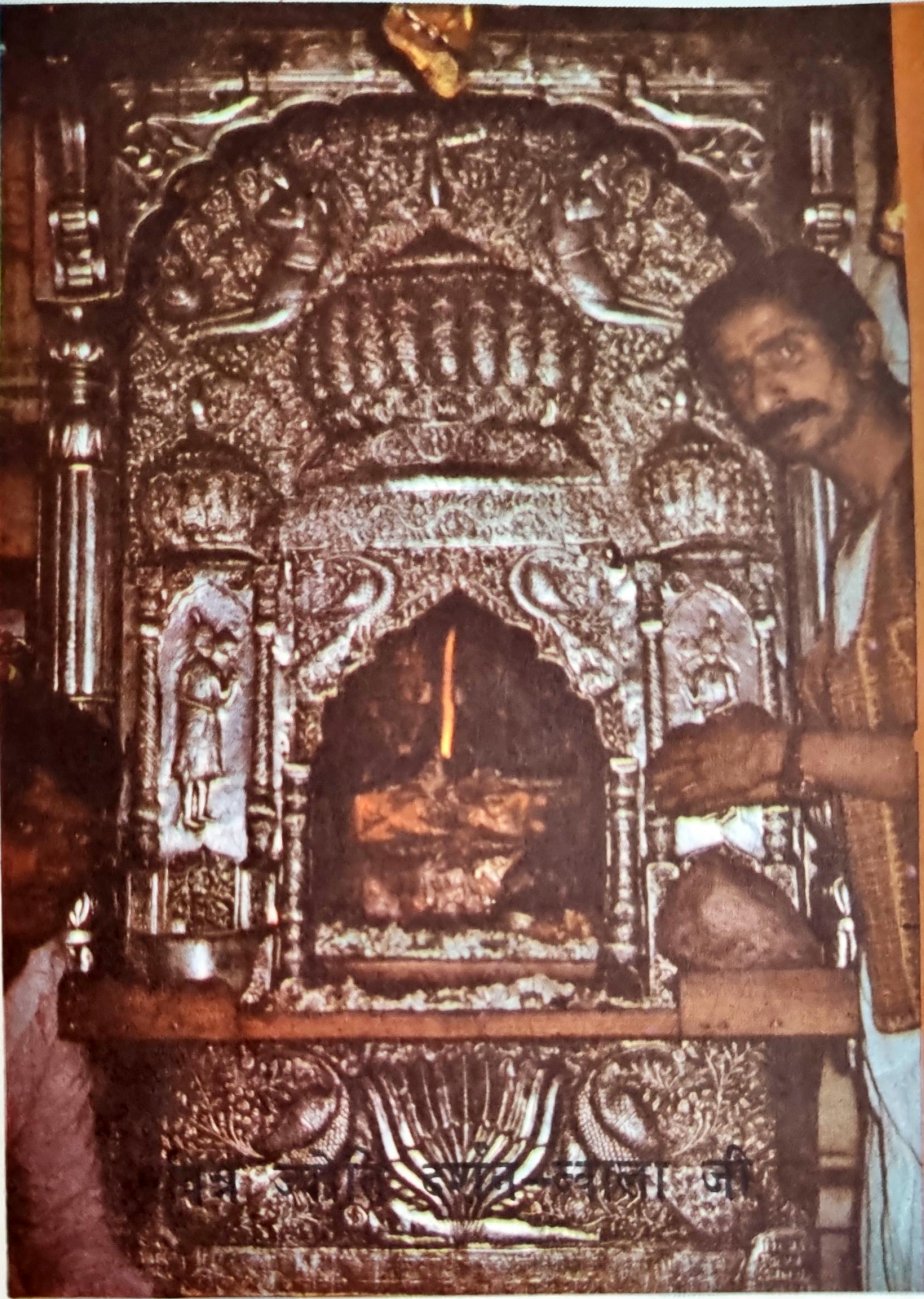
मुख्य ज्योति-दर्शन—श्री ज्वालामुखी मन्दिर में देवी के दर्शन नौ-ज्योति के रूप में होते हैं। यह ज्योतियें कभी कम या अधिक भी रहती हैं। भाव इस प्रकार माना जाता है—नवदुर्गा ही चौदह-भुवनों की रचना करने वाली हैं, जिनके सेवक—सत्व, रज और तम यह तीन गुण हैं। मन्दिर के द्वार के सामने चांदी के आले में जो मुख्य ज्योति सुशोभित है, उसको महाकाली का रूप कहा जाता है। यह पूर्ण-ब्रह्म-ज्योति है तथा मुक्ति व भुक्ति देने वाली है। शेष ज्योतियों के पवित्र नाम व दर्शन इस प्रकार हैं—

हवन कुण्ड सहित पवित्र ज्योति-दर्शन—१. चांदी के जाला में सुशोभित मुख्य ज्योति का पवित्र नाम 'महाकाली' है जो मुक्ति-भुक्ति देने वाली है। २. इसके कुछ नीचे ही भण्डार भरने वाली महामाया 'अन्नपूर्णा' की ज्योति है। ३. दूसरी ओर शत्रुओं का विनाश करने वाली 'चण्डी' माता की ज्योति है। ४. समस्त व्याधियों का नाश करने वाली यह ज्योति 'हिंगलाज' भवानी की है। ५. पंचम ज्योति 'विन्ध्यवासिनी' है, जो शोक से छुटकारा देती है। ६. धन-धान्य देने वाली 'महालक्ष्मी' की यह ज्योति कुण्ड में विराजमान है। ७. विद्यादात्री 'सरस्वती' भी कुण्ड में सुशोभित है। ८. सन्तान सुख देने वाली 'अम्बिका' भी कुण्ड में दर्शन दे रही है। ९. इसी कुण्ड में विराजमान परम-पवित्र 'अंजना' आयु व सुख प्रदान करती है।

हवन कुण्ड
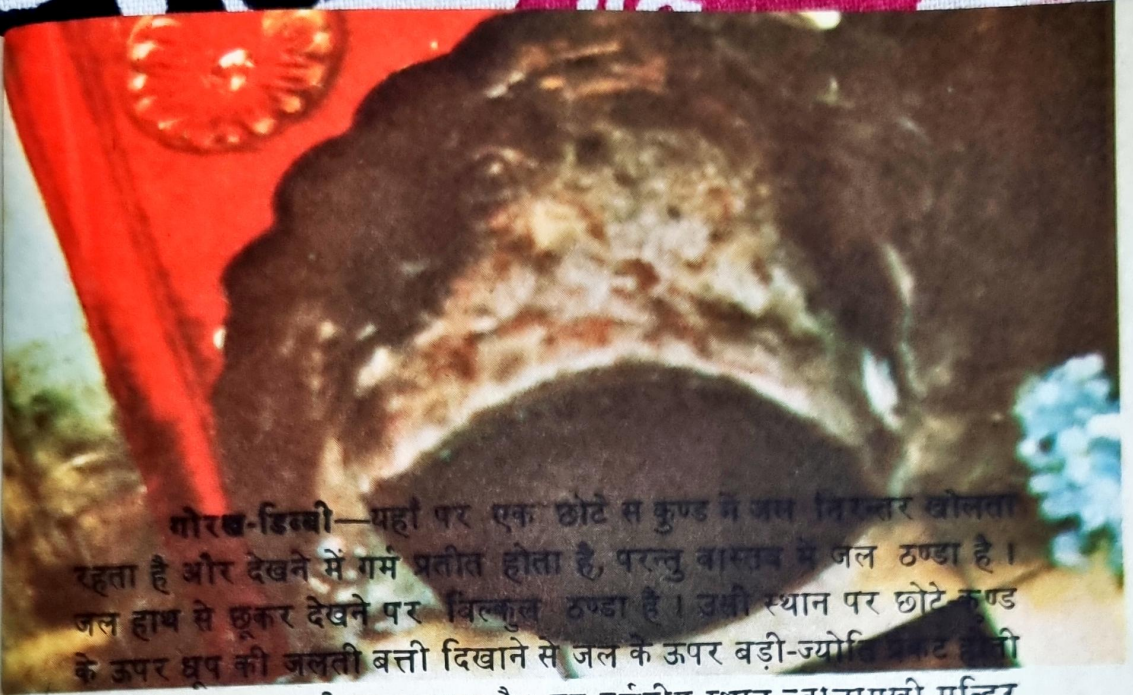
गोरख-डिब्बी—यहाँ पर एक छोटे से कुण्ड में जल निरन्तर खौलता रहता है और देखने में गर्म प्रतीत होता है, परन्तु वास्तव में जल ठण्डा है। जल हाथ से छूकर देखने पर बिल्कुल ठण्डा है। उसी स्थान पर छोटे कुण्ड के ऊपर धूप की जलती बत्ती दिखाने से जल के ऊपर बड़ी-ज्योति प्रकट होती है। इसे रूद्र कुण्ड भी कहा जाता है। यह दर्शनीय स्थान ज्वालामुखी मन्दिर की परिक्रमा में लगभग दस सीढ़ियां ऊपर चढ़कर दाईं ओर को है कहा जाता है कि यहाँ पर गुरु गोरखनाथ जी ने तपस्या की थी। वह अपने शिष्य सिद्ध नागार्जुन के पास डिब्बी धर कर खिचड़ी मांगने गए, परन्तु खिचड़ी लेकर वापिस नहीं लौटे और डिब्बी का जल गर्म नहीं हुआ।

सेजा भवन—यह भगवती ज्वालादेवी का शयन स्थान है। भवन में प्रवेश करते ही बीचो बीच संगमरमर का चबूतरा बना हुआ है, जिसके ऊपर चांदनी लगी हुई है। रात्रि १० बजे शयन-आरती के उपरान्त भगवती के शयन के लिए कपड़े एवं पूर्ण श्रृंगार के सामान के साथ पानी का लोटा और दातुन आदि रखी जाती है। सेजा भवन में चारों ओर दस महाविद्याओं तथा महाकाली, महालक्ष्मी व महासरस्वती की मूर्तियाँ बनी हैं। श्री गुरु गोविन्द सिंह जी द्वारा रखवाई गई श्री गुरु ग्रन्थ साहिब की हस्तलिखित प्रतिलिपि भी सेजा-भवन में सुरक्षित है।

श्री ज्वालामुखी तीर्थ के दर्शनीय स्थल

श्री राधा-कृष्ण मन्दिर—↑ गोरख-डिब्बी के समीप ही राधा कृष्ण जी का एक छोटा-सा मन्दिर है। विश्वास किया जाता है कि यह अति प्राचीन मन्दिर कटोच राजाओं के समय में बनवाया गया था।

लालशिवालय→ गोरख-डिब्बी से कुछ ऊपर चढ़ने पर शिव-शक्ति और फिर लाल-शिवालय के दर्शन होते हैं। शिव शक्ति में शिवलिंग के साथ ज्योति के दर्शन होते हैं। लाल शिवालय भी सुन्दर दर्शनीय मन्दिर है।

सिद्धि नागार्जुन→ यह रमणीक स्थान लाल-शिवालय से ऊपर लगभग एक फर्लाङ्ग सीढ़ियां चढ़कर आता है। यहाँ पर डेढ़ हाथ ऊँची काले-पत्थर की मूर्ति है। इसी को सिद्ध-नागार्जुन कहते हैं। इसके विषय में ऐसी कहावत प्रसिद्ध है कि जब गुरु गोरखनाथ जी खिचड़ी लाने गए और बहुत देर हो जाने पर भी वापिस न लौटे, तब उनके शिष्य सिद्ध-नागार्जुन पहाड़ी पर चढ़कर उन्हें देखने लगे कि गुरू जी कहाँ निकल गए। वहाँ से इन्हें गुरू जी तो दिखाई न दिए, परन्तु यह स्थान इतना मनोहर लगा कि नागार्जुन वहीं समाधि लगा कर बैठ गए।

अम्बिकेश्वर महादेव— सिद्धि नागार्जुन से लगभग एक फर्लांग पूर्व की ओर यह मन्दिर है। इस स्थान को उन्मत्त-भैरव भी कहते हैं। श्री शिव महापुराण की पीछे लिखी कथा के अनुसार जहाँ-२ भी सती के अंग-प्रत्यङ्ग गिरे, वहीं-२ पर शिवजी ने किसी नं किसी रूप में निवास किया। यथा-ज्वालामुखी में शिव जी उन्मत्त-भैरव रूप से स्थित हुए। मन्दिर अम्बिकेश्वर-महादेव के नाम से प्रसिद्ध है। स्थान रमणीक है।

टेढ़ा मन्दिर—अम्बिकेश्वर से लगभग एक फर्लाङ्ग की चढ़ाई चढ़ने के बाद इस प्राचीन मन्दिर में सीताराम जी के दर्शन होते हैं। कहा जाता है कि भूचाल आने से यह मन्दिर बिल्कुल टेढ़ा (तिरछा) हो गया था, फिर भी देवी के प्रताप से गिरा नहीं। देखने में अब भी यह मन्दिर टेढ़ा अर्थात् एक ओर को झुका हुआ है। इसीलिए यह टेढ़ा-मन्दिर नाम से जन-साधारण में अधिक प्रसिद्ध है।

कथा ध्यानू-भक्त की……

जिन दिनों भारत में मुगल सम्राट अकबर का शासन था, उन्हीं दिनों की यह घटना है। नदोन ग्राम निवासी माता का एक सेवक (ध्यानू भक्त) एक हजार यात्रियों सहित माता के दर्शन के लिए जा रहा था। इतना बड़ा दल देखकर बादशाह के सिपाहियों ने चाँदनी चौक दिल्ली में उन्हें रोक लिया और अकबर के दरबार में ले जाकर ध्यानू भक्त को पेश किया।

बादशाह ने पूछा—तुम इतने आदमियों को साथ लेकर कहाँ जा रहे हो ?

ध्यानू ने हाथ जोड़ कर उत्तर दिया—मैं ज्वालामाई के दर्शन के लिए जा रहा हूँ। मेरे साथ जो लोग हैं, वह भी माता के भक्त हैं और यात्रा पर जा रहे हैं।

अकबर ने यह सुनकर कहा—यह ज्वालामाई कौन है ? और वहाँ जाने से क्या होगा ?

ध्यानू भक्त ने उत्तर दिया—महाराज ! ज्वालामाई संसार की रचना एवं पालन करने वाली माता हैं। वे भक्तों के सच्चे हृदय से की गई प्रार्थनाएँ स्वीकार करती हैं तथा उनकी सब मनोकामनाएँ पूर्ण करती हैं। उनका प्रताप ऐसा है कि उनके स्थान पर बिना तेल-बत्ती के ज्योति जलती रहती हैं। हम लोग प्रतिवर्ष उनके दर्शन करने जाते हैं।

अकबर बादशाह बोले—तुम्हारी ज्वालामाई इतनी ताकतवर है, इसका यकीन हमें किस तरह आए ? आखिर तुम माता के भक्त हो, अगर कोई करिश्मा हमें दिखाओ तो हम भी मान लेंगे।

ध्यानू ने नम्रता से उत्तर दिया—श्री मान् ! मैं तो माता का एक तुच्छ सेवक हूँ, मैं भला कोई चमत्कार कैसे दिखा सकता हूँ ?

अकबर ने कहा—अगर तुम्हारी बंदगी पाक व सच्ची है तो देवी माता जरूर तुम्हारी इज्जत रखेगी। अगर वह तुम जैसे भक्तों का ख्याल न रखे तो फिर तुम्हारी इबादत का क्या फायदा ? या तो वह देवी ही यकीन के कबिल नहीं, या तुम्हारी इबादत (भक्ति) झूठी है। इम्तहान के लिए हम तुम्हारे घोड़े की गर्दन अलग किए देते हैं, तुम अपनी देवी से कहकर उसे दुबारा जिन्दा करवा लेना।

इस प्रकार घोड़े की गर्दन काट दी गई।

ध्यानू भक्त ने कोई उपाय न देखकर बादशाह से एक माह की अवधि तक घोड़े के सिर व धड़ को सुरक्षित रखने की प्रार्थना की। अकबर ने ध्यानू भक्त की बात मान ली। यात्रा करने की अनुमति भी मिल गई।

बादशाह से विदा होकर ध्यानू भक्त अपने साथियों सहित माता के दरबार में जा उपस्थित हुआ। स्नान-पूजन आदि करने के उपरान्त रात भर जागरण किया। प्रातःकाल आरती के समय हाथ जोड़ कर ध्यानू ने प्रार्थना की—हे मातेश्वरी ! आप अन्तर्यामी हैं, बादशाह मेरी भक्ति की परीक्षा ले रहा है, मेरी लाज रखना, मेरे घोड़े को अपनी कृपा व शक्ति से जीवित कर देना, चमत्कार पैदा करना, अपने सेवक को कृतार्थ करना। यदि आप मेरी प्रार्थना स्वीकार न करेंगी तो मैं भी अपना सिर काटकर आपके चरणों में अर्पित कर दूंगा, क्योंकि लज्जित होकर जीने से मर जाना अधिक अच्छा है। यह मेरी प्रतिज्ञा है आप उत्तर दें।

कुछ समय तक मौन रहा।

कोई उत्तर न मिला।

इसके पश्चात् भक्त ने तलवार से अपना शीश काट कर देवी को भेंट कर दिया।

उसी समय साक्षात् ज्वाला देवी प्रकट हुई और ध्यानू भक्त का सिर धड़ से जुड़ गया, भक्त जीवित हो गया। माता ने भक्त से कहा कि दिल्ली में घोड़े का सिर भी धड़ से जुड़ गया है, चिन्ता छोड़ कर दिल्ली पहुंचो। लज्जित होने का कारण निवारण हो गया। और जो कुछ इच्छा हो, वर मांगो—

ध्यानू भक्त ने माता के चरणों में शीश झुका कर प्रणाम कर निवेदन किया—हे जगदम्बे ! आप सर्व शक्तिमान हैं, हम मनुष्य अज्ञानी हैं, भक्ति की विधि भी नहीं जानते। फिर भी विनती करना हूँ कि जगद्माता ! आप अपने भक्तों की इतनी कठिन परीक्षा न लिया करें। प्रत्येक संसारी भक्त आपको शीश भेंट नहीं दे सकता। कृपा करके, हे मातेश्वरी ! किसी साधारण भेंट से ही अपने भक्तों की मनोकामनायें पूर्ण किया करो।

"तथास्तु ! अब से मैं शीश के स्थान पर केवल नारियल की भेंट व सच्चे हृदय से की गई प्रार्थना द्वारा ही मनोकामना पूर्ण करूँगी।" यह कर माता अन्तर्ध्यान हो गई।

इधर तो यह घटना घटी, उधर दिल्ली में जब मृत घोड़े के सिर व धड़, माता की कृपा से अपने आप जुड़ गए तो सब दरबारियों सहित बादशाह अकबर आश्चर्य में डूब गये। बादशाह ने कुछ सिपाहियों को ज्वाला जी भेजा। सिपाहियों ने वापिस आकर अकबर को सूचना दी—वहाँ जमीन में से रोशनी की लपटें निकल रही हैं, शायद उन्हीं की ताकत से यह करिश्मा हुआ है। अगर आप हुक्म दें तो इन्हें बन्द करवा दें। इस तरह हिन्दुओं की इबादत की जगह ही खत्म हो जायगी।

अकबर ने स्वीकृति दे दी। शाही सिपाहियों ने सर्व-प्रथम माता की पवित्र ज्योति के ऊपर लोहे के मोटे-मोटे तवे रखवा दिए। परन्तु दिव्य ज्योति तवे फोड़कर ऊपर निकल आई। इसके पश्चात् एक नहर का बहाव उस ओर मोड़ दिया गया, जिससे नहर का पानी निरन्तर ज्योति के ऊपर गिरता रहे। फिर भी ज्योति का जलना बन्द न हुआ। शाही सिपाहियों ने अकबर को सूचना दे दी—जोतों का जलना बन्द नहीं हो सकता, हमारी सारी कोशिशें नाकाम हो गईं। आप जो मुनासिब हो करें। यह समाचार पाकर बादशाह अकबर ने दरबार के विद्वान् ब्राह्मणों से परामर्श किया। तथा ब्राह्मणों ने विचार करके कहा कि आप स्वयं जाकर देवी के चमत्कार देखें नियमानुसार भेंट आदि चढ़ाकर देवी माता को प्रसन करें। बादशाह के लिए दरबार जाने का नियम यह है कि वह स्वयं अपने कन्धे पर सवामन शुद्ध सोने का छत्र लादकर नंगे पैरों माता के दरबार में जाए। तत्पश्चात् स्तुति आदि करके माता से क्षमा माँग लें।

अकबर ने ब्राह्मणों की बात मान ली। सवामन पक्का सोने का भव्य छत्र तैयार हुआ। फिर वह छत्र अपने कन्धे पर रख कर नंगे पैरों बादशाह ज्वाला जी पहुंचे। वहाँ दिव्य ज्योति के दर्शन किए, मस्तक श्रद्धा से झुक गया, अपने पर पश्चाताप होने लगा। सोने का छत्र कन्धे से उतार कर रखने का उपक्रम किया···परन्तु···छत्र गिर कर टूट गया। कहा जाता है कि वह

सोने का न रहा, किसी विचित्र धातु का बन गया—जो न लोहा था, न पीतल, न ताँबा, न सीसा।

अर्थात् देवी ने भेंट अस्वीकार कर दी।

इस चमत्कार को देखकर अकबर ने अनेक प्रकार से स्तुति करते हुए माता से क्षमा की भीख माँगी और अनेक प्रकार से माता की पूजा आदि करके दिल्ली वापिस लौटा। आते ही अपने सिपाहियों को सभी भक्तों से प्रेम-पूर्वक व्यवहार करने का आदेश निकाल दिया।

अकबर बादशाह द्वारा चढ़ाया गया खण्डित छत्र माता के दरबार के बाँईं ओर आज भी पड़ा हुआ देखा जा सकता है।

॥ बोलो साँचे दरबार की जय ॥

अकबर का छत्र—मुगल बादशाह अकबर द्वारा प्रायश्चित्त स्वरूप माता के दरबार में चढ़ाया गया सवा मन भारी शुद्ध सोने का छत्र, जो खण्डित अवस्था में रखा हुआ आज भी उस घटना का प्रत्यक्ष प्रमाण है, जिसे ध्यानू भक्त की कथा कहा जाता है।

ज्वाला जी

मंगल की सेवा सुन मेरी देवा, हाथ जोड़ तेरे द्वार खड़े ।
पान सुपारी ध्वजा नारियल, ले ज्वाला तेरी भेंट करे ।।
सुन जगदम्बा कर न विलम्बा, सन्तन का भण्डार भरे ।
सन्तन प्रतिपाली, सदा खुशहाली, सब जग का कल्याण करे ।।

बुद्धि विधाता, तू जग माता, मेरा कारज सिद्ध करे ।
चरण कमल का लिया आसरा, शरण तुम्हारी आन परे ।।
जब-जब भीर पड़ी भक्तन पर, तब-तब आय सहाय करे ।
सन्तन प्रतिपाली···

बार-बार तू सब जग मोहे, तरुणी रूप अनूप धरे ।
माता हो कर पुत्र खिलावे, भार्या हो कर भोग करे ।।
सन्तन सुखदाई सदा सहाई, सन्त खड़े जय-जयकार करे ।
सन्तन प्रतिपाली···

ब्रह्मा विष्णु महेश सहस्त्रफन, भेंट के लिए तेरे द्वार खड़े ।
अटल सिंहासन बैठी माता, सिर सोने का छत्र फिरे ।।
जो कोई नाम लेई अम्बा का, पाप छिनक में भस्म करे ।
सन्तन प्रतिपाली···

वार शनिश्चर कुम-कुम वरणी, जंब लंकण्ड़ पर हुक्म करे ।
खप्पर खड्ग त्रिशूल हाथ ले, रक्तबीज को भस्म करे ।।
शुम्भ निशुम्भ पछाड़े माता, महिषासुर को पकड़ दले ।
सन्तन प्रतिपाली···

ब्रह्मा वेद पढ़े तेरे द्वारे, शिवशंकर हरि ध्यान करे ।
इन्द्र कृष्ण तेरी करें आरती, चंवर कुबेर डुलाय रहे ।।
जय जननी जय मातुभवानी, अटलभवन में राज्य करे ।
सन्तन प्रतिपाली···

हवन-पूजा-आरती

ऐसी मान्यता है कि ज्वालामुखी में श्रद्धापूर्वक किए गए पूजन-हवन आदि दस हजार गुना अधिक फल प्रदान करते हैं। यद्यपि नवरात्रों के समय किए गए होम सर्वाधिक फल देने वाले माने जाते हैं, तथापि वर्ष के अन्य दिनों में श्रद्धा एवं विश्वास से किए गए सभी धार्मिक-कृत्य अवश्य ही मनोकामना पूर्ण करते हैं। इसके अतिरिक्त यथाशक्ति ब्राह्मण-भोजन तथा कन्या पूजन भी किया जाता है। सम्पूर्ण कार्यों की सिद्धि हेतु ब्राह्मण कुमारी, विजय की कामना के लिए क्षत्रिय-कन्या तथा धन सम्पदा आदि लाभ प्राप्ति के लिए वैश्य-कन्या का पूजन करते हैं। धर्म-ग्रन्थों में लिखे अनुसार निर्दोष व आरोग्य ब्राह्मण कुमारी की पूजा मनुष्य के पहले किए हुए सभी पापों को नष्ट कर देती है।

श्री ज्वाला देवी की पूजा तीन प्रकार से किए जाने का विधान है—

१. **पंचोपचार**—गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य

२. **दशोपचार**—पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, चन्दन

३. **षोड्षोपचार**—आसन, स्वागत, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, मधुपर्क, स्नान, वस्त्र, आभूषण, चन्दन, इतर, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, प्रणाम

इसके अतिरिक्त श्री ज्वालामुखी मन्दिर में प्रति दिन पाँच बार आरती होती है।

१. **पहली आरती**—ब्रह्म-मुहूर्त में प्रातःकाल की जाती है, इसमें माल-पुआ, खोया और मिश्री का भोग लगता है।

२. **दूसरी आरती**—पहली आरती के १ घंटा पश्चात् मंगल आरती होती है; जिसमें पीले चावल तथा दही का भोग लगाते हैं।

३. **तीसरी आरती**—मध्याह्न-काल में चावल, षट्‌रस-दाल तथा मिष्टान्न का भोग।

४. **चौथी आरती**—सायंकालीन आरती है। पूरी, चना तथा हलुवा का भोग।

५. **पांचवी आरती**—शयन आरती, रात्रि के १० बजे दूध, मलाई व ऋतुफल का भोग लगाया जाता है।

नौ ज्योतियों के दर्शन महात्म्

तेरी नौ-नौ ज्योतां जागें, आजा ऊँचे पर्वत वाली ए।
तेरे भक्त आहुतियां पावें, आजा मेरी शेरां वाली ए॥

पहली ज्योति माता तेरी महाकाली कहलाये,
मुक्ति-भक्ति के देने वाली ज्वालामुखी सुहाये।
तेरी ज्योति न बुझने पाये ॥ आजा०
दूजी ज्योति माता तेरी अन्नपूर्णा भराई,
अपने भक्तों के तू जननी अन्न भण्डार भराई।
वह तो षटरस भोजन पाये ॥ आजा०
तीजी ज्योति महारानी की चण्डी जी कहलाये,
अपने भक्तों के तू माता शत्रु नाश कराये।
उनका बाल न होवे बांका ॥ आजा०
चौथी ज्योति माता जी की हिंगलाज कहलाती,
जो श्रद्धा से भक्ति करता सगरे दुःख मिटाती।
सगरी व्याधा नाश कराये ॥ आजा०
विन्ध्यवासिनी पंचम ज्योति कहता है जग सारा,
अपने भक्तों का करती है शोकों से छुटकारा ॥
उनके सारे कष्ट मिटाये ॥ आजा०
कुण्ड के माहिं ज्योति छटवीं महालक्ष्मी माई,
इसके पूजन करने से स्वर्णादिक घर भर जाई।
उनके सकल भण्डार भराये ॥ आजा०
सप्तम ज्योति सरस्वती माँ सारा जगत पुकारे,
जो कोई भी ध्यान लगाये विद्या आये द्वारे।
जहाँ जावे आदर पाये ॥ आजा०
ज्योति आठवीं को जग सारा कहे अम्बिका वाली,
है जग में विख्यात मात सन्तान के देने वाली।
मैया गोद न खाली राखे ॥ आजा०
बसे कुण्ड में नौवीं ज्योति नाम अंजनी माता,
इसका पूजन आयु और सुख की सिद्धि का दाता।
'भक्तों' सभी ज्योति पर वारी ॥ आजा०

श्री वैष्णो देवी गुफा में पिण्डी-दर्शन

गुफा के अन्त में जिस स्थान पर पवित्र पिण्डियों के दर्शन किए जाते हैं वहां पांच-छः व्यक्ति ही बैठ सकते हैं। यहां भगवती वैष्णो मां के दर्शन तीन भव्य पिण्डियों के रूप में होते हैं......महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती। पिण्डियों के पीछे कुछ श्रद्धालु भक्तों एवं जम्मू-काश्मीर के भूतपूर्व नरेशों द्वारा स्थापित मूर्तियां एवं यन्त्र इत्यादि हैं। प्रातः एवं सायं दोनों समय पिण्डियों का स्नान, शृंगार, पूजन तथा आरती होती है।

'मुँह मांगी मुरादें' देने वाली माता वैष्णो देवी जम्मू-काशमीर राज्य में त्रिकूट-पर्वत की सुन्दर गुफा के भीतर तीन भव्य-पिण्डियों के रूप में विराजमान है, जहाँ प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में यात्री दर्शन करके मनोकामना पूर्ण करते हैं। ऐसी मान्यता है कि यहाँ पर सती की एक बाजू (भुजा) गिरी थी।

मार्ग-परिचय—पठानकोट से जम्मू लगभग ३ घण्टे का बस-मार्ग है, रेल भी जम्मू तक आती है। जम्मू से यात्री बस द्वारा केवल २ घण्टे में कटरा पहुँच जाते हैं। जम्मू से कटरा ५२ किलोमीटर कटरा से १४ किलोमीटर पैदल चढ़ाई प्रारम्भ होती है, जिसे साधारण व स्वस्थ यात्री ४ घंटे में चढ़ पाते हैं। जो यात्री पैदल जाने में असमर्थ हों, उनके लिए कटरा में ही घोड़ा-खच्चर आदि सुविधा से उचित मूल्य पर मिलते हैं। वैष्णो देवी जाने वाले प्रत्येक यात्री के लिए कटरा से यात्रा-पर्ची प्राप्त करना अनिवार्य है। यह पर्ची कटरा-बस-स्टैण्ड पर स्थित टूरिस्ट-सेंटर से निःशुल्क दी जाती है।

माता वैष्णव देवी के अवतार धारण की कथा

देश में विपरीत परिस्थितियाँ होने पर समय-समय पर महाशक्ति ने भिन्न-भिन्न रूप धारण कर दुष्टों का नाश करके भक्तों की रक्षा की है। देवताओं के एकत्रित तेज समूह से उत्पन्न महाशक्ति ने कालान्तर में महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती के रूप धारण किए—यह तीनों रूप ही रज, तम और सात्विक गुणों के प्रतीक हैं।

त्रेतायुग में जब पृथ्वी पर रावण, कुम्भकरण, खर-दूषण, ताड़का आदि राक्षसों ने अत्याधिक अत्याचार आरम्भ किए तब भगवती की समस्त शक्तियों ने एकत्र होकर धर्म और साधुओं की रक्षा के लिए अपने सम्मिलित तेज समूह से एक दिव्य शक्ति को जन्म देने का निश्चय किया। फलस्वरूप एक सुन्दर दिव्य-कन्या उसी समय प्रकट हुई। उस कन्या ने महाशक्तियों से पूछा—आपने मुझे क्यों उत्पन्न किया? तो महाशक्तियों ने उस दिव्य कन्या से कहा—इस संसार में हमने तुम्हें धर्म की रक्षा एवं उसके प्रचार के लिए उत्पन्न किया है। अब तुम दक्षिण भारत में जाकर रत्नाकर सागर के घर पुत्री बनकर जन्म लो। वहाँ तुम भगवान विष्णु के अंश से पैदा होगी। उसके बाद तुम आत्म प्रेरणा से धर्म हित सब कार्य करोगी।

महादेवियों की इच्छानुसार दिव्य कन्या ने रत्नाकर सागर के घर में अवतार लिया। कन्या का नाम त्रिकुटा रखा गया। बाद में यही कन्या भगवान् विष्णु के अंश से पैदा होने के कारण 'वैष्णवी' नाम से

प्रसिद्ध हुई और जिस धर्म का प्रचार कन्या ने किया वह वैष्णव धर्म कहलाया।

थोड़े समय में ही देवी त्रिकुटा ने अपनी दिव्य शक्तियों से ऋषियों, मुनियों और देवता को भी आकर्षित कर लिया। प्रसिद्धि फैलती गई और दूर-दूर से लोग कन्या के दर्शन के लिए आने लगें। कुछ समय बाद त्रिकुटा ने अपने पिता से आज्ञा लेकर समुद्र के तट पर तप करना आरम्भ कर दिया और वहीं भगवान रामचन्द्रजी के ध्यान में लीन होकर उनके आगमन की प्रतीक्षा करने लगी। रावण द्वारा सीताजी का हरण किए जाने पर, श्रीराम वानर सेना सहित जब लंका जाने के लिए समुद्र तट पर पहुँचे तब उन्होंने वहाँ समाधि में बैठी उस दिव्य-कन्या को देखा। श्री राम के पूछने पर त्रिकुटा ने अपना परिचय दिया और तपस्या का कारण बताया कि मैंने आपको पति के रूप में पाने का निश्चय किया है। यह सुनकर भगवान राम ने उत्तर दिया कि—हे सुन्दरी! मैंने इस अवतार में एक-पत्नीव्रती होने का संकल्प लिया है किन्तु तुम्हारे तप का फल तुम्हें अवश्य प्राप्त हो, इसलिए मैं किसी दिन तुम्हारे पास वेष बदलकर अवश्य आऊँगा। उस समय यदि तुमने मुझे पहचान लिया तो मैं तुम्हें ग्रहण कर लूँगा।

कहते हैं लंका से अयोध्या लौटते समय भगवान एक वृद्ध साधु का रूप धर कर कन्या के पास गए, किन्तु वह उन्हें न पहचान सकी तो भगवान ने कन्या को यह आश्वासन दिया कि कलयुग में कल्की अवतार में तुम मेरी सहचरी बनोगी। उस समय तक तुम उत्तर भारत के मणिक पर्वत पर तीन शिखरों वाले त्रिकूट पर्वत की सुरम्य गुफा में, जहाँ तीन महाशक्तियों का निवास है, तपस्या में मग्न रहो। वहाँ पर तुम अमर हो जाओगी। लांगुर वीर तुम्हारे प्रहारी रहेंगे। समस्त भूमण्डल पर तुम्हारी महिमा फैलेगी और तुम वैष्णव देवी नाम से प्रसिद्ध होवोगी।

विश्वास किया जाता है कि तभी से रत्नाकर सागर की कुमारी कन्या वैष्णवी, जो देवियों के पुण्य आशीर्वाद से प्राप्त हुई, त्रेतायुग से ही सुन्दर गुफा में विराजमान है। जिसके विषय में प्राचीन कथाओं से आधार लिया जा सकता है। युग बदलते रहे, माता अपनी लीला समय-समय पर करती रही और न जाने कितनी ही अन्य कथाओं का जन्म हुआ। कलयुग में जिस कथा के कारण इस स्थान का प्रचार अधिक हुआ वह इस प्रकार है—

(कलयुग में भक्त बाबा श्रीधर को माता के कन्या रूप में दर्शन की कहानी पृष्ठ ६१ पर पढ़ें)

श्री वैष्णो देवी की सम्पूर्ण यात्रा—चाहे आप उसे शक्ति नाम से पुकारें, चाहे देवी मान कर पूजा करें। वैज्ञानिक ऊर्जा, या कोई अन्य व्यक्ति उसे ताकत (Power) कहले। बिना शक्ति के संसार में पत्ता भी नहीं हिल सकता, कोई भी काम नहीं हो सकता। ब्रह्मा, विष्णु, महेश सहित सभी देवता भी बिना शक्ति के अधूरे हैं। वह भी महा-शक्ति की इच्छा से रचना, पालन और संहार के अपने-२ कार्य उसी के आदेशानुसार करते हैं। चित्र में बस अड्डा कटरा से बाण गंगा, चरण पादुका, आदिकुमारी, हाथी मत्था, भैरों मन्दिर व दरबार की सम्पूर्ण वैष्णो-यात्रा को दर्शाया गया है।

श्री वैष्णो देवी की कहानी

कटरा से लगभग २ किलोमीटर की दूरी पर हन्साली नामक ग्राम है। कहा जाता है कि लगभग ७०० वर्ष पूर्व माता के परम भक्त श्रीधर जी हुए हैं जो इसी ग्राम के निवासी थे। वे नित्य नियम से कन्या पूजन करते थे, सन्तान न होने के कारण वह दुःखी रहा करते। श्रीधर जी की सच्ची उपासना और दृढ़ विश्वास देखकर माँ वैष्णो को स्वयं एक दिन कन्या रूप धारण करके आना पड़ा। भक्त जी कन्या पूजन की तैयारी कर रहे थे, छोटी-छोटी कन्याएं उपस्थित थीं। उन्हीं में जगन्माता भी कन्या बनकर आ गयीं। नियम के अनुसार पाँव धोकर भोजन परोसते समय श्रीधर जी की दृष्टि उस महादिव्यरूप कन्या पर पड़ी। भक्त जी विस्मय में डूब गये क्योंकि यह कन्या उन्होंने कभी देखी न थी और न ही उनके गाँव की प्रतीत होती थी। अन्य कन्याएं तो दक्षिणा लेने पर चली गईं पर यह दिव्यरूपा वहीं बैठी रही। श्रीधर जी उससे कुछ प्रश्न करने वाले थे कि कन्या रूपी महाशक्ति स्वयं ही बोली—'मैं तुम्हारे पास एक काम से आई हूँ।' छोटी-

सी कन्या के मुंह से ऐसी विचित्र बात सुन कर भक्त जी बहुत हैरान हुए! कन्या ने कहा कि आप अपने गाँव में और आस-पास यह संदेश दे आओ कि कल दोपहर आपके यहाँ महान् भंडारे का आयोजन है। इतना कहकर वह कन्या वहाँ से लुप्त हो गयी।

श्रीधर जी विचारों में डूब गए।

आखिर यह कन्या कौन थी ?

हो न हो यह जरूर कोई शक्ति थी, परन्तु भंडारे वाली समस्या से श्रीधर जी परेशान हो गये। अन्त में उन्होंने कन्या की बात को ही मुख्य रखा और आस-पास के गाँवों में भंडारे का निमन्त्रण देने निकल पड़े।

श्रीधर जी भंडारे का संदेश देने एक गाँव से दूसरे गाँव जा रहे थे तो मार्ग में साधुओं के एक दल को देखकर श्रीधर जी ने उन्हें प्रणाम किया और साथ ही उन्हें होने वाले भंडारे में पधारने का निमन्त्रण भी दिया। गोरखनाथ ने भक्त जी से उनका नाम पूछा और मुस्कराकर बोले-ब्राह्मण! तू मुझे, भैरवनाथ और अन्य ३६० चेलों को भोजन का निमन्त्रण देने में भूल रहा है। हमें तो देवराज इन्द्र भी भोजन न दे सके। इस पर श्रीधर जी ने उन्हें कन्या के आगमन वाली सब कथा सुनाई। गोरखनाथ ने विचार किया कि ऐसी कौन-सी कन्या है जो सबको भंडारा खिला सकती है? परीक्षा करके तो देखनी चाहिए। अतः उन्होंने श्रीधर जी से कह दिया—हमें भोजन स्वीकार है, कल समय पर आ जायेंगे।

उस दिन तो श्रीधर जी गाँव-गाँव घूमते, थके हारे रात को आकर सो गये। प्रातःकाल होते ही फिर पंडित जी इस विचार में खो गये कि मुझ में तो इतने बड़े भंडारे की सामर्थ्य नहीं, प्रबन्ध कैसे हो? न मालूम समय कब बीत गया और भीड़ एकत्रित होने लगी। उधर गोरखनाथ और भैरवनाथ भी अपने चेलों सहित आ गये।

श्रीधर जी चिन्ता में बैठे थे कि अचानक ही दिव्य-रूपी कन्या प्रकट हो गयी और पंडित जी के सम्मुख आकर बोली—अब सब प्रबन्ध हो जायगा उठिए और जोगियों से कहिए कि कुटिया में चलकर भोजन करो। श्रीधर जी उत्साह से उठे और गुरुजी से भोजन के लिए कुटिया में पधारने को कहा तो गुरुजी बोले—'हम चेलों सहित इस कुटिया में नहीं आ सकते क्योंकि स्थान बहुत छोटा है।' इस पर श्रीधरजी बोले—जोगोनाथ उस कन्या ने ऐसा ही कहा है।

जिस समय योगी कुटिया में गये तो सबके सब आराम से बैठ गए फिर भी जगह बच रही। बाहर भी सब लोग बैठे थे। कन्या ने जब अपने

एक विचित्र पात्र से सबको भोजन देना आरम्भ किया तो श्रीधर जी प्रसन्न हुए और बाकी सब हैरान !

यह देखकर गोरखनाथ और भैरव ने परस्पर विचार किया कि यह कन्या अवश्य ही कोई शक्ति है। यह वास्तव में कौन है, इसका पता लगाना चाहिए। जिस समय कन्या सबको भोजन परोसती हुई भैरवनाथ के पास पहुंची तो भैरव ने कहा—कन्या ! तूने सबको उनकी इच्छा का भोजन दिया है लेकिन मेरा मन कुछ और चाहता है। 'बोलो योगीनाथ तुम्हें क्या चाहिए ?' कन्या का उतर था। भैरव ने देवी से माँस और मदिरा मांगी तो कन्या ने जोगी को आदेश के स्वर में कहा—'यह एक ब्राह्मण के घर का भंडारा है। जो कुछ वैष्णव भंडारे में होता है, वही मिलेगा।'

भैरव हठ करने लगा, क्योंकि उसने तो कन्या की परीक्षा लेनी थी, लेकिन भैरवनाथ के मन की बात तो वैष्णव देवी पहले ही जान चुकी थी। ज्योंही भैरव ने क्रोध करके कन्या को पकड़ना चाहा वह कन्या रूपी महा-शक्ति अन्तर्ध्यान हो गई।

भैरवनाथ ने योगविद्या के बल से देखा कि वह दिव्य-कन्या पवन-रूप होकर त्रिकूट पर्वत की ओर बढ़ रही है। अतः योगीराज भैरव ने पीछा करना प्रारम्भ कर दिया। दर्शनी दरवाजा, बाणगंगा, चरणपादुका आदि स्थानों से होकर आदिकुमारी वाले स्थान पर पहुंकर गर्भ-जून-गुफा में देवी ने नौ महीने तक विश्राम किया। भैरव फिर भी खोज करता रहा अन्त में किस प्रकार सुन्दर गुफा के समीप पहुँच कर देवी ने भैरव का वध किया, यह आप इसी पुस्तक में आगे पढ़ेंगे।

× × ×

उधर भक्त श्रीधर जी को कन्या के अचानक चले जाने से अत्याधिक बेचैनी थी। उन्होंने खाना-पीना भी त्याग दिया था। परन्तु माता तो अपने भक्तों के दिल को जानती है। अतएव एक रात स्वप्न में वैष्णों माँ ने श्रीधर जी को दर्शन दिए और अपने धाम का दर्शन भी कराया। स्वप्न में ही भक्त जी ने माता के साथ सम्पूर्ण यात्रा की। प्रातःकाल श्रीधर जी उठे तो बहुत प्रसन्न थे। स्वप्न में देखे हुए स्थानों से उनका हृदय अब तक पुलकित था।

उसी दिन से पंडित जी वैष्णों देवी के साक्षात् दरबार की खोज करने लगे। एक दिन स्वप्न में देखे अनुसार, चलते-चलते गुफा का द्वार देख लिया और उसमें प्रवेश करके माता के दरबार के साक्षात् दर्शन करके जीवन सफल बना लिया। श्रीधर जी ने हाथ जोड़कर जगदम्बे की आरा-धना की। माता ने उन्हें चार पुत्रों का वरदान दिया और कहा कि तुम्हारा

वंश मेरी पूजा करता रहेगा। सुख-शान्ति की प्राप्ति होगी। इसीलिए आज तक उन्हीं का वंश मां की पूजा करता आ रहा है।

इसके बाद श्रीधर जी ने गुफा का प्रचार किया। भक्तों की मनोकामनाएं पूर्ण होती रहीं। प्रचार बढ़ता रहा। हजारों, लाखों यात्री प्रतिवर्ष मां के दर्शनों के लिए आने लगे और वैष्णो देवी नाम से तीर्थ प्रसिद्ध हो गया।

श्री वैष्णों देवी

तीर्थ के दर्शनीय स्थल

श्री रघुनाथ मन्दिर जम्मू—यह वैष्णो देवी यात्रा का सर्वाधिक प्रसिद्ध एवं दर्शनीय मन्दिर है। राम यंत्र के आधार पर निर्मित इस मन्दिर में लगभग सभी देवी-देवताओं के पन्द्रह विशाल मन्दिर हैं। महाराज रणवीर सिंह द्वारा १८५६ ई० में बनवाया गया पूरे भारत में बेजोड़ मन्दिर जम्मू बस अड्डे के समीप ही स्थित है। कुछ यात्री वैष्णो देवी जाने से पहले तथा कई वापिसी में भी यहां दर्शन करने आते हैं।

पहला दर्शन—

कौल कन्धोली (नगरोटा)—जम्मू से ८ कि. मी. दूर, नगरोटा नामक स्थान में भगवती का कौल-कंधोली नाम से प्राचीन मन्दिर है। वैष्णो देवी यात्रा में पहला दर्शन इसे ही माना जाता है। जिन दिनों जम्मू से पैदल यात्रा हुआ करती थी, तब यह स्थान पहला तथा मुख्य दर्शन समझा जाता था। अब यदि यात्री चाहें तो जम्मू में ही बस-ड्राईवर को इस स्थान पर रुकने के लिए आग्रह कर देवें, अन्यथा बस यहां नहीं रुकती। कहा जाता है कि माता ने यहां अन्य स्थानीय बालिकाओं के साथ गेंद-क्रीड़ा की थी। गेंद खेलते हुए जब कन्याओं को प्यास लगी तो माता ने उन्हें एक कौल (कटोरा) दिया, जिसको सूखे स्थान पर कन्धोलने (हिलाने) से पानी निकल आया था। इसी से यह स्थान कौल-कन्धोली नाम से प्रसिद्ध हो गया।
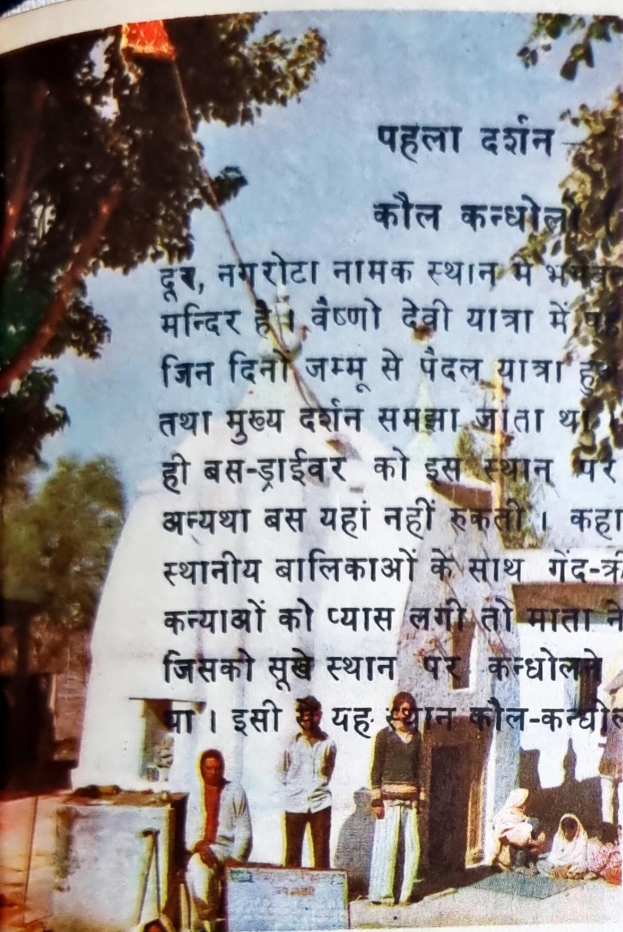
दूजा दर्शन—देवामाई—जम्मू से लगभग ४ किलोमीटर दूर कटरा-मार्ग पर ही नुमाई नामक गांव पड़ता है। नुमाई से देवामाई तक जाने के लिए पगडण्डी-मार्ग है। इस स्थान को वैष्णो देवी की यात्रा में दूसरा दर्शन कहा गया है। यहाँ पर माता की मूर्ति के अतिरिक्त छोटा त्रिशूल भी है। जिन दिनों पैदल यात्रा होती थी, उन दिनों देवामाई में बहुत चहल-पहल रहती थी। अब तो बहुत कम यात्री देवामाई तक जा पाते हैं। इस स्थान का नाम वैष्णो माता की एक पुजारिन माई-देवा के नाम पर रखा गया, जिसने आयुपर्यन्त नियम, श्रद्धा एवं भक्तिपूर्वक देवी की आराधना की थी।
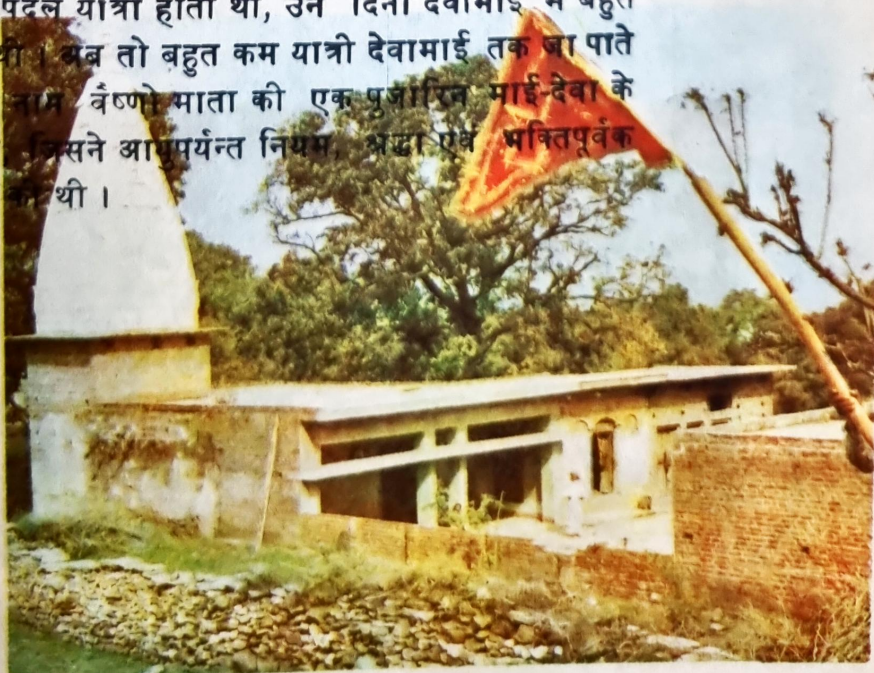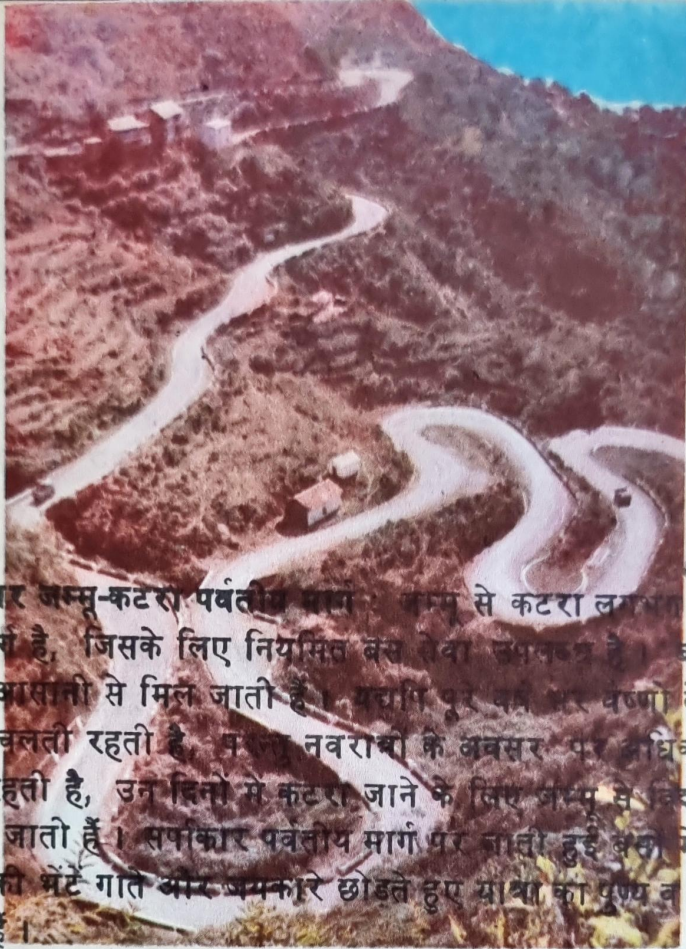
सर्पाकार जम्मू-कटरा पर्वतीय मार्ग : जम्मू से कटरा लगभग २ घण्टे का मार्ग है, जिसके लिए नियमित बस सेवा उपलब्ध है। बसें हर समय आसानी से मिल जाती हैं। यद्यपि पूरे वर्ष भर वैष्णो देवी की यात्रा चलती रहती है, परन्तु नवरात्रों के अवसर पर अधिक भीड़-भाड़ रहती है, उन दिनों में कटरा जाने के लिए जम्मू से विशेष बसें चलाई जाती हैं। सर्पाकार पर्वतीय मार्ग पर जाती हुई बसों में यात्री माता की भेंटें गाते और जयकारे छोडते हुए यात्रा का पुण्य व आनन्द लूटते हैं।

अघार बाबा-जित्तो—कटरा से रियासी जाने वाली सड़क पर लगभग साढ़े चार कि० मी० दूर माता वैष्णो देवी के परम भक्त बाबा जीतो का जन्म स्थान है। यहां पर जो पवित्र जल धारा बहती है, ऐसा विश्वास किया जाता है कि, उसमें स्नान करने से स्त्रियों के बांझपन का दोष दूर होता है। श्रद्धालु-भक्त मनोकामना पूर्ण होने पर यहां भण्डारा करते हैं। बाबा जीतो का गुणगान करते हैं।

बस स्टैण्ड कटरा ↑ इसी स्थान से पैदल यात्रा प्रारम्भ होती है। साथ ही कटरा का एक लम्बा बाजार है, जहां से खाने-पीने की तथा अन्य आवश्यक वस्तुएं उचित मूल्य पर मिल जाती हैं। ठहरने के लिए निकट ही होटल, धर्मशाला तथा यात्री विश्राम गृह बने हुए हैं। सामने श्रीधर सभा द्वारा निर्मित ७ मंजिला विशाल भवन है, जिसमें हजारों यात्री ठहर सकते हैं। यात्रा पर जाने से पहले, प्रत्येक यात्री के लिए, बस स्टैण्ड पर ही स्थित टूरिस्ट रिसेप्शन सेंटर से यात्रा पर्ची प्राप्त करना अनिवार्य है, अन्यथा बाण गंगा से वापिस आना पड़ता है। यह यात्रा-पर्ची निःशुल्क दी जाती है।

श्री रघुनाथ मन्दिर, कटरा : कटरा बस स्टैण्ड से लगभग आधा किलोमीटर की दूरी पर बना हुआ यह सुन्दरमन्दिर स्वामी नित्यानंद जी का बनवाया हुआ है। यहां श्री रघुनाथ जी के अतिरिक्त ११२ मन वजनी हनुमान जी की विशालकाय मूर्ति भी है भगवान आशुतोष का मन्दिर और स्वामी नित्यानन्द जी की समाधि भी बनी हुई है। वैष्णो देवी जाते हुए यात्री रास्ते में इस स्थान के दर्शन कर सकते हैं।

भूमिका मन्दिर

कटरा से लगभग दो मील दूर, पेन्थल जाने वाली सड़क पर यह ऐतिहासिक मन्दिर है। यही वह स्थान है जहां से माता वैष्णव देवी की कलियुग की कहानी की विशेष भूमिका बंधती है। कहा जाता है कि लगभग ७०० वर्ष पहले यहीं पर भक्त बाबा श्रीधर जी को देवी के कन्या रूप में साक्षात् दर्शन हुए। समीप ही हंसाली नामक एक गांव है। पं० श्रीधर जी इसी गांव के निवासी थे तथा नित्य नियम से कन्या पूजन किया करते थे। इसी स्थान पर दिव्य कन्या ने अपने दिव्य कमण्डल से नाथों को भण्डारा दिया तथा भैरवनाथ के अभद्र व्यवहार की चेष्टा करने पर अन्तर्ध्यान हो गईं।

दर्शनी दरवाजा : दिव्य कन्या भूमिका नामक स्थान से लोप होकर इसी स्थान से होती हुई त्रिकूट पर्वत की ओर बढ़ी। स्मृति स्वरूप यह दरवाजा बना है। त्रिकूट पर्वत का पहला दर्शन यहां होता है, इसी से इसे दर्शनी दरवाजा कहा जाता है। कटरा से लगभग डेढ़ किलोमीटर है।
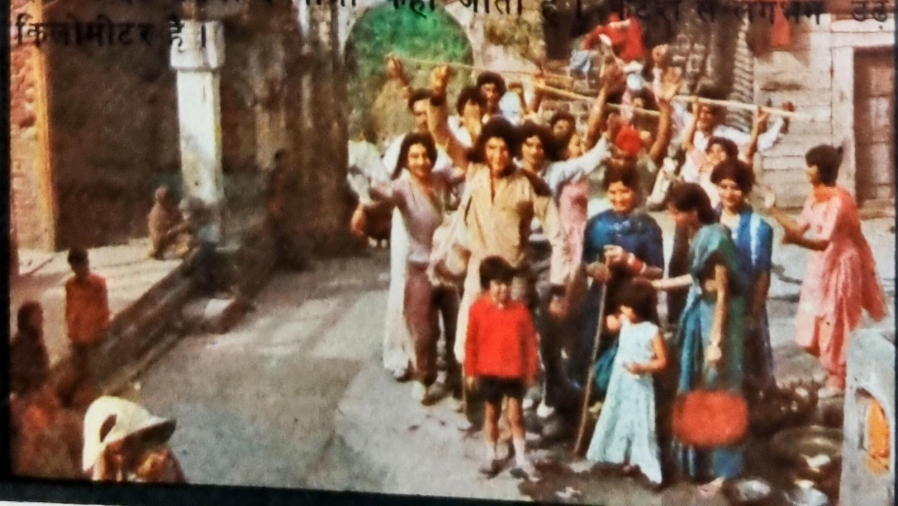
चिन्तामणि मन्दिर व धर्मशाला—कटरा से माता के दर्शनों के लिए जाते हुए यात्री मार्ग में ही इस भव्य मन्दिर के दर्शन कर सकते हैं। चिंतामणि ट्रस्ट द्वारा निर्मित विशाल धर्मशाला में आधुनिक सुविधा से युक्त कई कमरे हैं, जहां यात्री विश्राम कर सकते हैं। मन्दिर में दुर्गा जी की सुन्दर प्रतिमा और विशाल शिवलिंग के दर्शन होते हैं। बस-स्टैण्ड से लगभग एक किलोमीटर है।

बाण गंगा के मन्दिर में प्रतिष्ठित देवी की मूर्ति : बाण गंगा का पुल पार करके सामने ही मन्दिर के प्रांगण में देवी की यह सुन्दर प्रतिमा प्रतिष्ठित है।

बाण गंगा का मन्दिर व पुल : कन्या-रूपी महाशक्ति जब उक्त [illegible] होकर आगे बढ़ी तो उसके साथ वीर लांगुर भी था। चलते २ [illegible] को प्यास लगी तो देवी ने पत्थरों में बाण मारकर गंगा [illegible] और अपने प्रहरी की प्यास को तृप्त किया। उसी [illegible] कर ही [illegible] गंगा में ही देवी ने अपने केश भी धोकरसंवारे इसलिए इसे बाल गंगा भी कहते हैं।
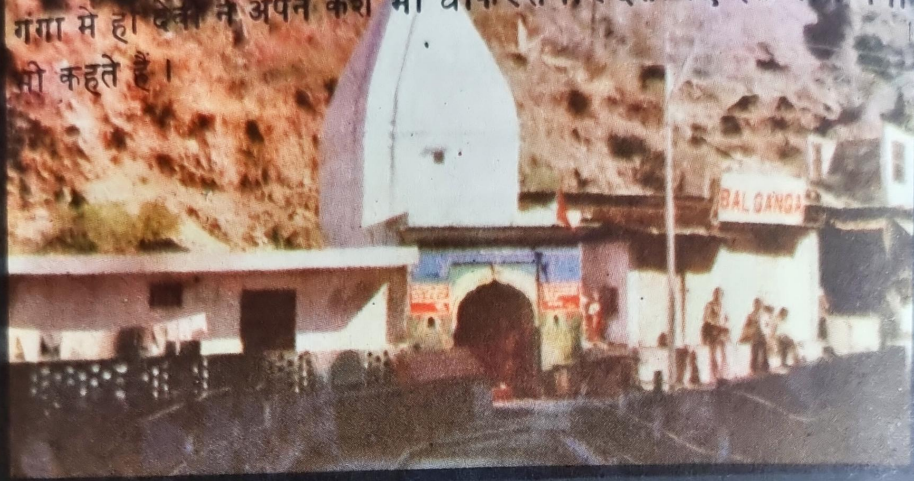
↑यह स्थान कटरा से २ किलोमीटर और पिछले दर्शनी दरवाजा नामक स्थान से एक किलोमीटर है। एक पुल द्वारा इस गंगा को पार कर आगे बढ़ते हैं। समीप ही मंदिर है। अधिकाँश लोग यहाँ स्नान भी करते हैं। यहीं से सीढ़ियों वाला पक्का मार्ग भी प्रारम्भ हो जाता है। साथ ही कच्चा मार्ग भी है जिससे खच्चर घोड़े आदि जाते हैं। वास्तव में यहीं से त्रिकूट पर्वत की कठिन चढ़ाई प्रारम्भ होती है।

चरण पादुका मन्दिर : इस स्थान पर रुक कर महाशक्ति देवी ने [illegible] की ओर देखा था कि भैरव जोगी आ रहा है या नहीं। [illegible] से इस स्थान पर माता के चरण-चिन्ह बन गए, इसी कारण इस स्थान को चरण पादुका पुकारा जाता है। बाण गंगा से यह [illegible] किलोमीटर की दूरी पर, समुद्रतल से [illegible]३८० फोट की ऊंचाई पर स्थित है।
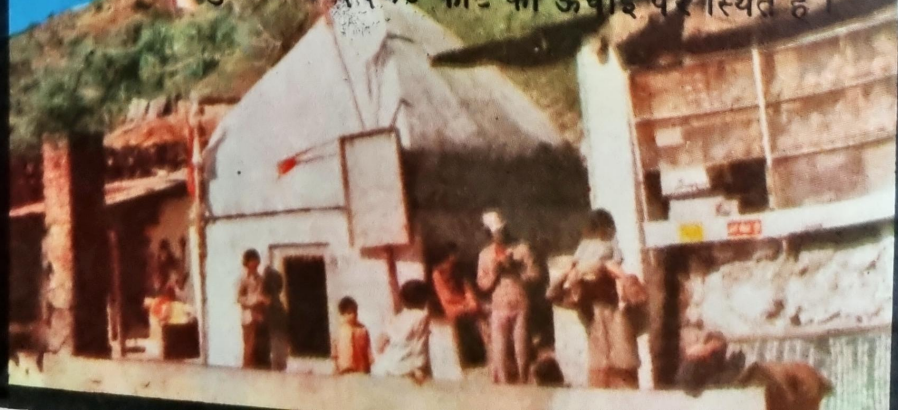
आदिकुमारी—इस स्थान पर दिव्य-कन्या ने एक छोटी गुफा के समीप तपस्वी साधु को दिव्य-दर्शन दिए और उसी गुफा में नौ महीने तक इस प्रकार रही जैसे कोई शिशु अपनी माता के गर्भ में नौ मास तक रहता है। तपी ने भैरव को बताया कि वह कोई साधारण कन्या नहीं अपितु महाशक्ति है और आदिकुमारी है। भैरव ने जैसे ही गुफा में प्रवेश किया, माता ने त्रिशूल प्रहार करके गुफा के पीछे दूसरा मार्ग बनाया और निकल गई। इस गुफा को गर्भ जून और स्थान को आदिकुमारी कहा जाता है। चरण-पादुका से ४.५ किलोमीटर, समुद्रतल से ४८०० फीट है।

हाथी मत्था की चढ़ाई—आदिकुमारी से आगे क्रमशः पहाड़ी यात्रा सीधी खड़ी चढ़ाई के रूप में प्रारम्भ हो जाती है। इसी कारण इसे हाथी मत्था के समान माना गया है। सीढ़ियों वाले रास्ते की अपेक्षा घुमावदार पहाड़ी पगडण्डी से जाने में चढ़ाई कम मालूम देती है। समुद्रतल से ऊंचाई ६५०० फीट के लगभग है। आदिकुमारी से लगभग २.५ किलोमीटर।
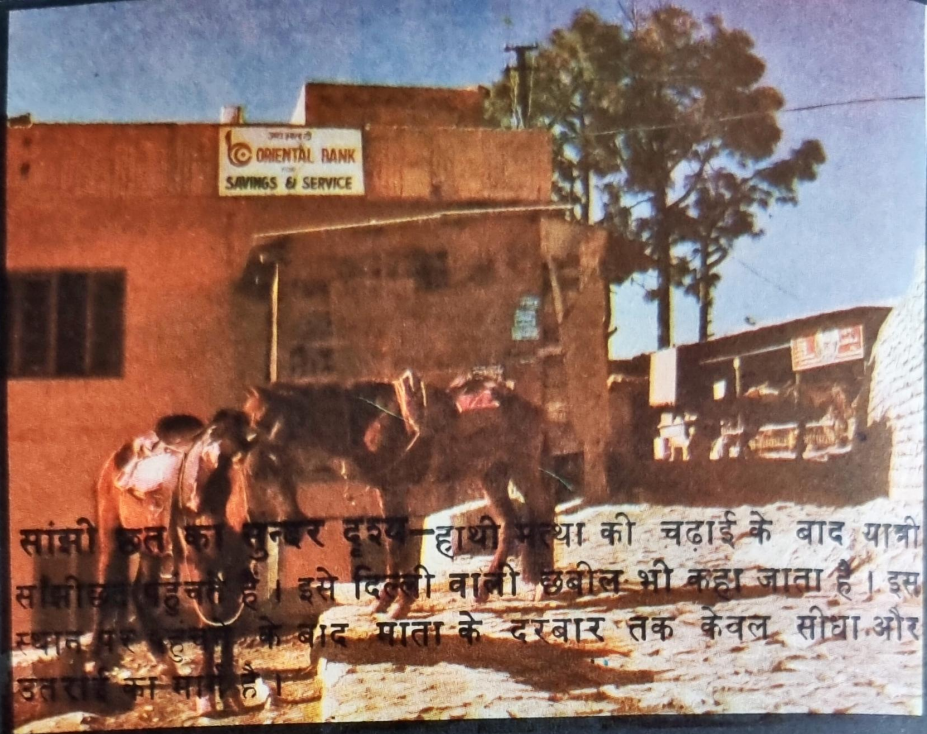
सांझी छत का सुन्दर दृश्य—हाथी मत्था की चढ़ाई के बाद यात्री सांझीछत पहुंचते हैं। इसे दिल्ली वाली छबील भी कहा जाता है। इस स्थान पर पहुंचने के बाद माता के दरबार तक केवल सीधा और उतराई का मार्ग है।

माता का भवन तथा गुफा का प्रवेश द्वार—गुफा के प्रवेश द्वार पर ही मन्दिर अथवा भवन बना है। इसके सामने क्रम से पंक्तिबद्ध होकर भक्तजन दर्शन के लिए प्रतीक्षा करते हैं। गुफा का प्रवेश द्वार काफी संकरा (तंग) है। लगभग दो गज तक लेटकर या काफी झुककर आगे बढ़ना पड़ता है, गुफा के अन्दर सीधे खड़ा नहीं हुआ जा सकता और टखनों की ऊँचाई तक शुद्ध एवं शीतल जल प्रवाहित होता रहता है, जिसे चरण गंगा कहते हैं।

[illegible] (हिमपात में) : महान आदर और सत्कार
[illegible] कटवर्ती क्षेत्र को देवी का दरबार नामक
[illegible] में प्रवेश करते ही यह दृश्य
[illegible] पूरा प्रबन्ध है। यहां यात्रा-
[illegible] के लिए नम्बर मिलता है। खाने
[illegible] प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र, पोस्ट आफ़िस,
[illegible] सहायता भी उपलब्ध है।

नई गुफा से बाहर आते हुए भक्तजन : यात्रियों की सुविधा के लिए २० मार्च १९७७ को इस नई गुफा का उद्‌घाटन डा० कर्णसिंह जी द्वारा सम्पन्न हुआ। प्रवेश द्वार संकरा होने के कारण यात्रियों को दर्शन करने के पश्चात् वापिस आने में काफी समय लग जाता था, जिससे अन्य यात्रियों को बड़ी देर तक प्रतीक्षा करनी पड़ती थी तथा सीमित संख्या में ही लोग दर्शन कर पाते थे।
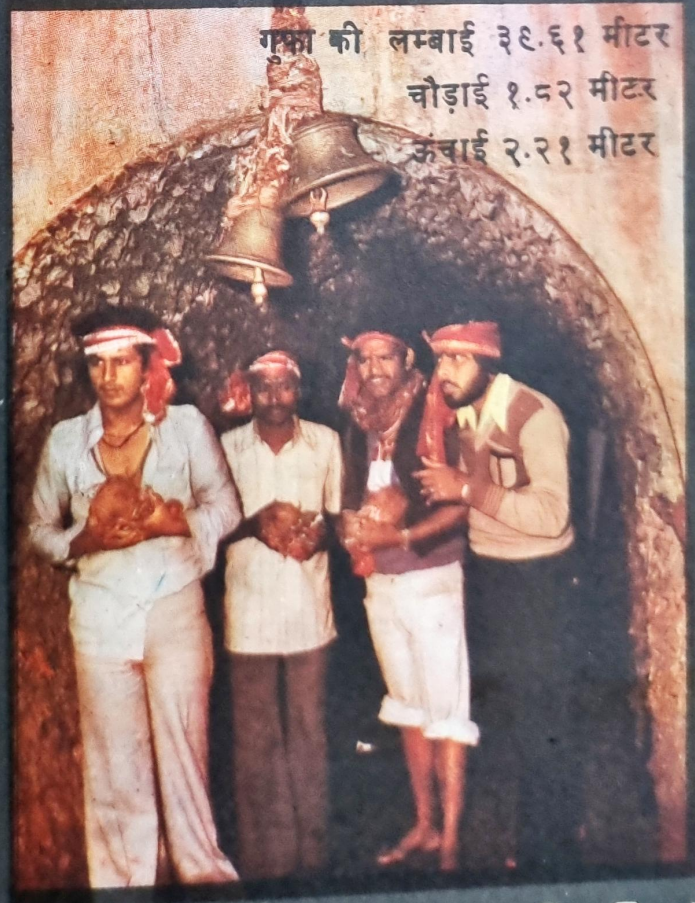
गुफा की लम्बाई ३९.६१ मीटर
चौड़ाई १.८२ मीटर
ऊंचाई २.२१ मीटर

वैष्णो देवी

हे मात मेरी, हे मात मेरी ।
कैसी यह देर लगाई है दुर्गे । हे मात···
भव-सागर में गिरा पड़ा हूँ ।
काम आदि ग्रह में घिरा पड़ा हूँ ।।
मोह आदि जाल में जकड़ा पड़ा हूँ । हे मात···
न मुझमें बल है न मुझमें विद्या ।
न मुझमें भक्ति न मुझमें शक्ति ।।
शरण तुम्हारी गिरा पड़ा हूँ । हे मात···
न कोई मेरा कुटुम्ब साथी ।
ना ही मेरा शरीर साथी ।।
आप ही उबारो पकड़ के बाहीं । हे मात···
चरण कमल को नौका बनाकर ।
मैं पार हूँगा खुशी मनाकर ।।
यमदूतों को मार भगाकर । हे मात···
सदा ही तेरे गुणों को गाऊँ ।
सदा ही तेरे स्वरूप को ध्याऊँ ।।
नित प्रति तेरे गुणों को गाऊँ । हे मात···
न मैं किसी का न कोई मेरा ।
छाया है चारों तरफ अन्धेरा ।।
पकड़ के ज्योति दिखा दो रस्ता । हे मात···
शरण पड़े हैं हम तुम्हारी ।
करो यह नैया पार हमारी ।।
कैसी यह देरी लगाई है दुर्गे । हे मात···

दूरी एवं ऊंचाई

स्थान का नाम	परस्पर दूरी	समुद्र तल से ऊंचाई
कटरा	—	२५०० फीट
दर्शनी दरवाजा	१ कि. मी.	२७०० "
बाण गंगा	१ कि. मी.	२८०० "
चरण पादुका	१.५ कि. मी.	३३८० "
आदिकुमारी	४.५ कि. मी.	४०८० "
हाथी मत्था	२.५ कि. मी.	६५०० "
सांझी छत	२.० कि. मी.	७२०० "
भैरव मन्दिर	१.५ कि. मी.	६५८३ "
वैष्णो भवन	२.५ कि. मी.	५२०० "

भैरों मन्दिर का इतिहास

देवी कन्या आगे बढ़ती रही—भैरव पीछा करता रहा। गुफा के द्वार पर देवी ने वीर लंगूर को प्रहरी बना कर खड़ा कर दिया और भैरव को अन्दर आने से रोकने के लिए कहा। कन्या गुफा में प्रवेश कर गई तो भैरव भी घुसने लगा। वीर लंगूर के साथ भैरव का युद्ध हुआ। फिर शक्ति ने चंडी का रूप धारण कर भैरव का वध कर दिया। धड़ वहीं गुफा के पास तथा सिर भैरों घाटी में जा गिरा। जिस स्थान पर भैरों का सिर गिरा था, उसी जगह भैरव मन्दिर का निर्माण हुआ है।

सिर धड़ से अलग होने पर भैरव की आवाज आई—हे आदि-शक्ति! कल्याणकारिणी मां! मुझे मरने का कोई दुःख नहीं, क्योंकि मेरी मृत्यु जगत रचयिता मां के हाथों हुई है। सो हे मातेश्वरी, मुझे क्षमा कर देना। मैं तुम्हारे इस रूप से अपरिचित था। माँ अगर तूने मुझे क्षमा न किया तो आने वाला युग मुझे पापी की दृष्टि से देखेगा और लोग मेरे नाम से घृणा करेंगे। 'माता न हो कुमाता' भैरव के मुख से बारम्बार माँ शब्द सुनकर जगकल्याणी मातेश्वरी ने उसे वरदान दिया कि मेरी पूजा के बाद तेरी पूजा होगी तथा तू मोक्ष का अधिकारी होगा। मेरे श्रद्धालु मेरे दर्शनों के पश्चात् तेरे दर्शन किया करेंगे। तेरे स्थान का दर्शन करने वालों की भी मनोकामना पूर्ण होगी। इसी कथा के अनुसार यात्री दरबार के दर्शनों के बाद वापसी में भैरों के मन्दिर में दर्शन के लिए जाते हैं।

चामुण्डा देवी

यह शिव और शक्ति का स्थान है, जिसको चामुण्डा-नन्दिकेश्वर धाम से जाना जाता है। बाणगंगा के तट पर स्थित यह उग्र-सिद्धपीठ प्राचीन काल से ही तपःसम्भूत योगियों, साधकों व तान्त्रिकों के लिए एकान्त-शांत एवं प्राकृतिक शोभा से युक्त स्थान है। बाईस ग्रामों की शमशान भूमि महाकाली चामुण्डा के रूप में मन्त्र-विद्या और सिद्धि का वरदायी क्षेत्र माना गया है, जहाँ भूतभावन भगवान् आशुतोष शिवशंकर—मृत्यु, विनाश और शवहारी विसर्जन का रूप लिए—साक्षात् माँ चामुन्डा के साथ बैठे हैं। यहाँ भक्तजन शिव+शक्ति मन्त्रों से पूजन, दान तथा श्राद्ध पिण्डदान आदि करते हैं। बाण गंगा में स्नान करके शतचण्डी पाठ सुनना तथा सुनाना श्रेष्ठ है। पहले यहाँ बलि भी दी जाती थी। इसके अतिरिक्त कुमारी-पूजन किया जाता है। रुद्राभिषेक करके गंगा लहरी से शंकर जी की स्तुति करते हैं।

चामुण्डा-मन्दिर

मार्ग-परिचय—पठानकोट से रेल की छोटी-लाईन, जो पपरोला जाती है, उस रेल में बैठकर यात्री चामुण्डा रेलवे-स्टेशन पर उतर सकते हैं। चामुण्डा रेलवे-स्टेशन मलाँ में बना है। यहाँ से मन्दिर लगभग ४ किलो-मीटर की दूरी पर है। मलाँ से चामुण्डा तक बस मिल सकती है। अन्यथा

यात्री पहाड़ी दृश्य देखते हुए पैदल ही आधे घण्टे में पहुँच जाते हैं। ज्वालामुखी से कांगड़ा २ घण्टे का बस-मार्ग है। काँगड़ा से मलाँ केवल डेढ़ घण्टे का बस-मार्ग है। पठानकोट से, जिला कांगड़ा की राजधानी धर्मशाला होकर, सीधी बसें भी चामुण्डा देवी जाती हैं।

श्री चामुण्डा देवी की कथा—

श्री चामुण्डा का पौराणिक कथानक एवं इतिहास दुर्गा सप्तशती के सप्तम-अध्याय में स्पष्ट हुआ है। मन्दिर की प्राचीन परम्परा एवं भौगोलिक स्थिति से स्पष्ट होता है कि यही वह स्थान है जहाँ चण्ड-मुण्ड राक्षस देवी से युद्ध करने आए और काली रूप धारण कर देवी ने उनका वध किया। अम्बिका की भृकुटि से प्रादुर्भूत कालिका ने जब चण्ड और मुण्ड के शिर उसको उपहार-स्वरूप भेंट किए तो अम्बा ने प्रसन्न होकर वर दिया कि तुमने चण्ड-मुण्ड का वध किया है, अतः संसार में तुम चामुण्डा नाम से विख्यात हो जाओगी। कथा इस प्रकार है—

अपने राजा शुम्भ-निशुम्भ की आज्ञा पाते ही चण्ड-मुण्ड आदि आयुधों से सुसज्जित होकर चतुरंगिणी सेना के साथ चल पड़े। वहाँ पहुंचकर उन्होंने देखा कि हिमालय की ऊँची स्वर्ण की चोटी पर सिंह पर देवी बैठी है और मन्द-मन्द हँस रही है। इस प्रकार उसे देख कर पकड़ने की चेष्टा करने लगे। किसी ने धनुष चढ़ा लिया, किसी ने तलवार संभाल ली एवं कितने ही देवी जी के पास पहुँच गए। तब अम्बिका जी उन शत्रुओं के प्रति क्रोध में आ गई। उस समय क्रोध के कारण उसका मुख काला हो गया, दवी के माथे पर कुटिल होकर भौंहें तन गईं। तब तो भयानक मुख वाली काली देवी तलवार तथा पाश लिए प्रगट हो गई। उसने अद्भुत सा अट्ठाँग धारण किया हुआ था, नरमुण्ड-माला शोभित थो, चीते के चर्म की साड़ी पहिने थी, शरीर का माँस सूखा दिखाई देता था, अत्यन्त भयानक रूप था, मुख को विस्तार से खोल रखा था, लपलपाती हुई जिह्वा और भी भयानक थी, धँसी हुई लाल लाल आखें थीं, गर्जना से सभी दिशाओं को भर दिया था। वह बड़े वेग से दैत्य सेना पर टूट पड़ी, बड़े बड़े असुरों को मारती हुई उनका भक्षण करने लगी। उन पार्श्व रक्षकों को, अंकुश धारियों को, महावत तथा योद्धाओं को, घण्टों के साथ कितने हाथियों को एक ही हाथ से पकड़ कर मुँह में डालने लगी। वैसे ही घोड़ों के साथ रथों को एवं सारथियों को भी मुँह में डाल २ कर अत्यन्त भयानक रूप से दाँतों से उन्हें चबाती जाती थी। किसी के केश पकड़ लेती, तो किसी की गर्दन दबा डालती, किसी को पैरों से दबोच देती तो किसी को छाती से धकेल कर मार गिराती। असुरों के द्वारा छोड़े हुए अस्त्र-शस्त्रों को मुँह से पकड़ती जाती, और दाँतों से पीसती जाती। काली

(शेष पृष्ठ ८३ पर)

चामुण्डा देवी

जय अम्बे गौरी मैया जय श्यामा गौरी।
निशिदिन तुमको ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिव जी॥ जय अम्बे
मांग सिंदूर विराजत, टीको मृगमद को।
उज्ज्वल से दोउ नयना, चन्द्रवदन नीको॥ जय अम्बे
कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर राजे।
रक्त पुष्प गलमाला, कण्ठ हार साजे॥ जय अम्बे
केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी।
सुर नर मुनिजन सेवत, तिनके दुख हारी॥ जय अम्बे
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती।
कोटिक चंद्र दिवाकर, समराजत जोती॥ जय अम्बे
शुम्भ-निशुम्भ विदारे, महिषासुर घाती।
धूम्र-विलोचन नयना, निशिदिन मदमाती॥ जय अम्बे
चण्ड-मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे।
मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भय दूर करे॥ जय अम्बे
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी।
आगम-निगम बखानी, तुम शिव पटरानी॥ जय अम्बे
चौंसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरों।
बाजत ताल मृदंगा, और बाजत डमरू॥ जय अम्बे
तुम हो जग की माता, तुम ही हो भरता।
भक्तन की दुख हरता, सुख सम्पति करता॥ जय अम्बे
भुजा चार अति शोभित, वर मुद्रा धारी।
मनवांछित फल पावत, सेवत नर-नारी॥ जय अम्बे
कंचन थाल विराजत, अगरु कपूर बाती।
मालकेतु में राजत. कोटिरतन ज्योती॥ जय अम्बे

कहा जाता है कि इस ग्राम के एक देवी भक्त को स्वप्न में चामुण्डा भगवती ने आदेश दिया कि जिस पिंड पर मेरा प्रतिदिन पूजन होता है उस पर मेरी मूर्ति की स्थापना करो। बाण गंगा के पार कगार के नीचे मेरी मूर्ति है उसी को इस पर स्थापित कर दीजिए और वहाँ मेरा पूजन किया जाए। तब से इस ही मूर्ति पर भगवती का पूजन होता है। किसी देवी भक्त ने यह मन्दिर बनवाया है जो ७०० वर्ष पुराना है। इस ग्राम का वह देवी भक्त कौन था जिसे यहाँ बाणगंगा तट पर पिंडी पूजन का आदेश दिया ? भगवती की कगार में पड़ी मूर्ति कौन और कब लाया ? किस देवी भक्त ने आदि चामुण्डा मन्दिर का निर्माण किया ? इस पर अनुसन्धान चल रहा है और तथ्य प्रकट नहीं हो पाया। मन्दिर के निर्माण काल की तिथियाँ भी शोध का विषय है।

चामुण्डा देवी की आरती का दृश्य
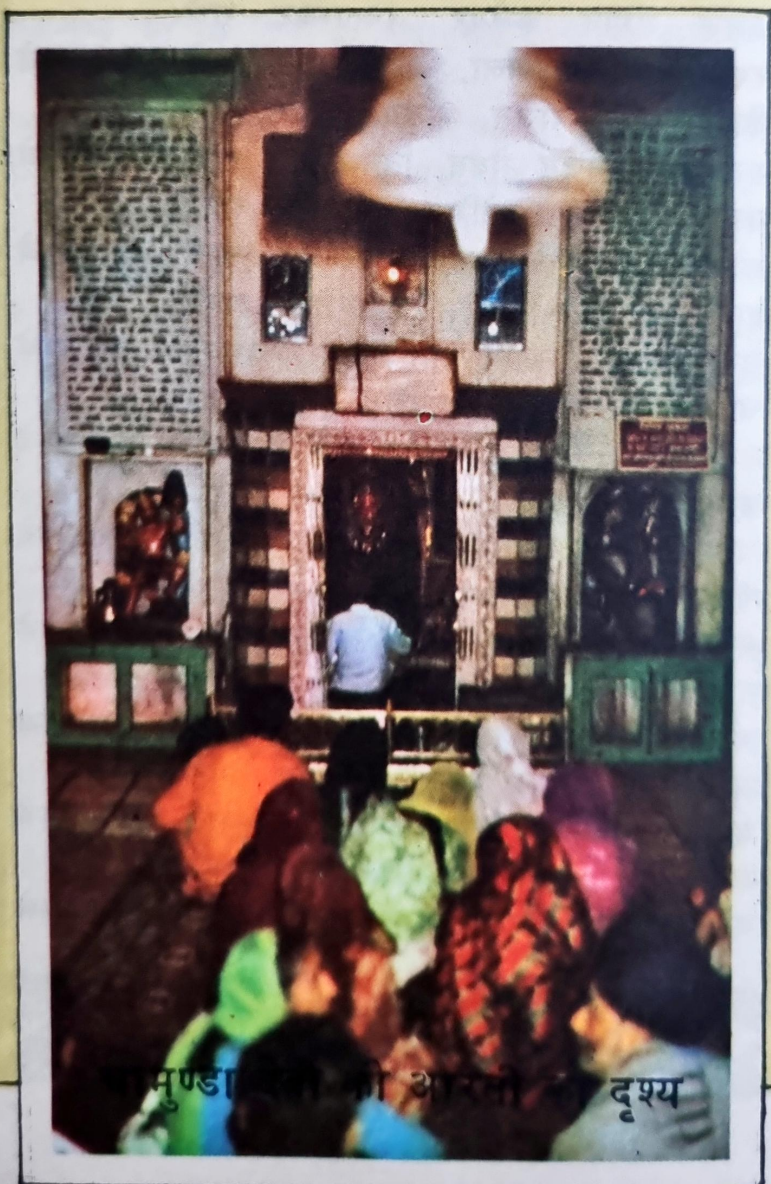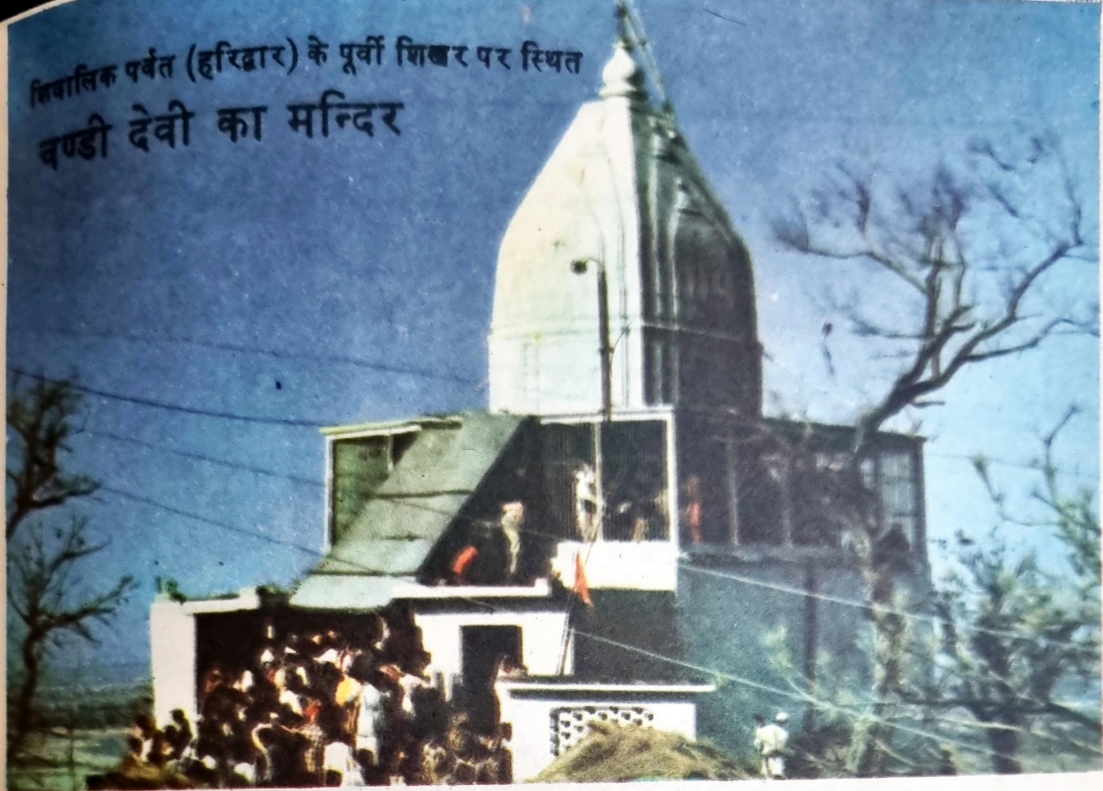
चण्डी देवी मन्दिर—

शिवालिक पर्वत के पूर्वी शिखर पर, मन्सा देवी के समान ही, गंगा के उस पार चण्डी देवी का यह प्राचीन मन्दिर है। विजया दशमी के बाद चतुर्दशी को यहां चण्डी चौदस का मेला लगता है। हरिद्वार से एक मील की दूरी पर मायापुर से नहर का पुल पार करके, फिर गंगा नदी को पार करना पड़ता है। मार्ग पथरीला है, लगभग तीन मील की चढ़ाई है। इसलिए दर्शन के लिए प्रातःकाल प्रस्थान करना चाहिए। मन्दिर पर या मार्ग पर खाने-पीने का कोई प्रबन्ध नही है, पानी की कमी है। अतः सब आवश्यक सामग्री अपने साथ ले जानी चाहिएं।

इसी पर्वत की ढलान पर अञ्जना देवी का मन्दिर है। पर्वत की तलहटी में गौरी शंकर का तथा नीलेश्वर महादेव के मन्दिर हैं। यह सब मन्दिर घने जंगल में स्थित हैं, यहां जंगली जानवरों जैसे शेर-चीता आदि का भी भय है।

श्री चण्डी देवी का एक अन्य प्रसिद्ध एवं ऐतिहासिक मन्दिर चण्डीगढ़ नगर से लगभग १० किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। कहा जाता है कि इसी मन्दिर के नाम से नगर का नाम चण्डीगढ़ प्रचलित हुआ है। सुन्दर दर्शनीय स्थान है।

(पृष्ठ ७८ का शेष)

जी ने इस प्रकार बलवान् दुरात्मा असुरों की वह सेना कुचल डाली, भक्षण कर डाली, कितने एक असुरों को मार पीट दिया। उस देवी ने कुछ एक तलवार से काट गिराये, कुछ एक हुंकार से भस्म कर दिये, कुछ एक खट्वांग से पीट दिए गये और कुछ एक दाँतों से कुचल दिए। क्षण भर में असुरों की वह सारी सेना मार पीट कर गिरा दी। यह देख चण्ड उस भयानक काल की ओर दौड़ा, इधर महा असुर मुण्ड ने भी महा भयंकर बाणों की वर्षा से एवं सहस्त्रों चलाए हुए चक्रों द्वारा उस भयानक आँखों वाली देवी को ढाँप दिया। वे अनेकों चक्र देवी के मुख में प्रवेश करते हुए इस प्रकार दिखाई देने लगे जैसे बहुत से सूर्य-बिम्ब बादलों के पेट में समाते जा रहे हों। तब तो ऐसे भयानक मुख के भीतर जिसका देख सकना भी कठिन था ऐसे दाँतों के प्रकाश से दमकती हुई अत्यन्त क्रोध में आकर भयानक गर्जना करती हुई वह काली भीषण अट्टहास करने लगी। हूँ-हूँ करती हुई बहुत बड़ी तलवार लिए हुए देवी चण्ड पर कूद पड़ीं। उसे बालों से पकड़ कर उसी तलवार से झट चण्ड का सिर काट दिया। तब चण्ड को इस प्रकार मारा गया देख कर मुण्ड देवी की ओर दौड़ा। कुपिता काली ने तलवार से मार कर मुण्ड को पृथ्वी पर गिरा दिया तथा महाबली मुण्ड को मरा हुआ देखकर और सेना का नाश भी देखकर बची खुची सेना भयभीत होकर इधर उधर भाग गई। अनन्ता काली जी ने चण्ड तथा मुण्ड के सिर हाथ में ले लिए। फिर भयानक अट्टहास करती हुई चण्डिका के पास पहुँचकर बोली—मैंने यह चण्ड और मुण्ड नामी महा पशु आपकी भेंट चढ़ा दिये, अब तो युद्ध में शुम्भ निशुम्भ का आप स्वयं वध करना। अपने सम्मुख लाये गए चण्ड-मुण्ड महा असुरों को देखकर कल्याणी चण्डिका काली से ललित वचन बोली—हे देवी कालिके! क्योंकि तुम चण्ड मुण्ड को लेकर मेरे पास आई हो, इस कारण लोक में चामुण्डा नाम से तुम्हारी ख्याति होगी।

श्री एम. एस. पुण्डीर कृत 'दुर्गा स्तुति' से—

कुछ दैत्यों को मार दिया, कुछ को खाया महाकाली ने
कुछ को पैरों से कुचल दिया, कुछ मसले खप्पर वाली ने
दल पर दल मार दिये, फैंके, महाशक्ति दीन दयाली ने
भेंटे दुर्गा को चण्ड-मुण्ड-सिर, काटे थे जो महाकाली ने
काली बोली माता अम्बे, इन दुष्टों को स्वीकार करो
तेरी ही शक्ति से मारे, जग भक्तों का कल्याण करो
दुर्गा बोली, देवी काली, तुम जाओ अब विश्राम करो
चामुण्डा होगा नाम तेरा, निज भक्तों के संताप हरो

मनसा देवी

श्री मनसा देवी का प्रसिद्ध मन्दिर भारत के प्रमुख नगर चण्डीगढ़ के समीप मनीमाजरा नामक स्थान पर है। मनसा देवी का यह स्थान प्रमुख शक्ति पीठ माना गया है। यहाँ पर सती का मस्तक गिरा था। चैत्र के नवरात्रों में बहुत भारी मेला लगता है। इस अवसर पर लाखों की संख्या में श्रद्धालु दर्शन-पूजन करते हैं।

मनीमाजरा जाने के लिए चण्डीगढ़ के बस स्टैण्ड से बसें सुविधा से मिल जाती हैं। इसके अतिरिक्त नगर के सभी भागों से हर प्रकार के वाहन मिल सकते हैं।

मनसा देवी का मन्दिर

मनसा देवी के मन्दिर का इतिहास

(कवि गरीब दास की कथा)

इस देवी के बारे में वैसे तो बहुत-सी कथाएँ प्रचलित हैं। परन्तु निम्नलिखित कथा प्रमाणिक मानी जाती है। मुगल सम्राट् अकबर के समय की बात है कि चण्डीगढ़ के पास मनीमाजरा नामक स्थान, जहाँ पर अब मनसा देवी का मन्दिर स्थित है, एक राजपूत जागीरदार के आधीन जागीर थी। अकबर सम्राट् जागीरदारों व कृषकों से लगान के रूप में

अन्न वसूल करता था। एक बार प्रकृति के प्रकोप वश फसल बहुत कम हुई जिससे राजपूत जागीरदार वसूली देने में असमर्थ रहे। इसलिए उन्होंने अकबर से लगान माफ करने की प्रार्थना की। यद्यपि मुगल सम्राट् अकबर काफी अच्छा बादशाह था, परन्तु उसने उन जागीरदारों की बातों की ओर कोई ध्यान न दिया और क्रोधित होकर उन सब जागीरदारों को कैद

नसा देवी के दर्शन

करवा दिया।

उनके इस प्रकार गिरफतार हो जाने का समाचार शीघ्र चारों तरफ फैल गया। तब दुर्गा के एक भक्त कवि गरीबदास ने दुर्गा जी की पूजा और हवन का आयोजन किया। देवी माता प्रसन्न हुईं और प्रकट होकर उससे बोलीं—'तुम्हारी क्या इच्छा है?' इस पर कवि गरीबदास ने कहा—'माँ, आप कृपाकर उन निर्दोष जागीरदारों को अपनी कृपा से मुक्त करवा दो।' माता ने प्रसन्न होकर गरीबदास को आर्शीवाद दिया और अर्न्तध्यान हो गईं।

और सब जागीरदार मुकदमा जीत गये और काजी द्वारा उस वर्ष का लगान स्थगित हो गया।

सब जागीरदार प्रसन्नचित्त जब अपने-अपने घरों को वापिस लोटे तो उन्हें सारी बात का और देवी के प्रकट होने का पता चला। तब उन सबने मिलकर वहाँ एक मन्दिर बनवा दिया जोकि मनसा देवी अर्थात् 'मन्शा को पूर्ण करने वाली देवी' के नाम से विख्यात हुआ।

जब वह मन्दिर स्थापित हो गया तो एक दिन महाराजा पटियाला, जोकि देवी के बहुत बड़े भक्त थे, उन्हें स्पप्न में देवी ने दर्शन दिए और कहा कि मैं मनीमाज़रा नामक स्थान पर प्रकट हुई हूँ। इसलिए तुम एक मन्दिर वहाँ बनवाकर पुण्य लाभ अर्जित करो।

महाराजा पटियाला ने तुरन्त देवी की आज्ञा का पालन किया और विशाल मन्दिर जोकि मनसा देवी के नाम से ही प्रसिद्ध हुआ। इसके अतिरिक्त उन्होंने पटियला शहर में भी दुर्गा का एक विशाल मन्दिर बनवाया था। मन्दिर में मनसा देवी की प्रतिमा तीन सिर व पाँच भुजाओं वाली है। वाम भाग में हवन कुण्ड तथा शीतला का मन्दिर है। दक्षिण भाग में चामुण्डा देवी और लक्ष्मी नारायण जी का मन्दिर है। सन्मुख भगवान शंकर जी का मन्दिर है। पश्चिम की ओर शिवजी का प्राचीन तथा प्रधान मन्दिर है। मन्दिर की परिक्रमा में भी विभिन्न देवी-देवताओं की सुन्दर मूर्रतियाँ दिवारों पर बनवाई गई हैं।

मनसा देवी की पूजन सामग्री

रोली, मौली, कपूर, केशर, चन्दन, यज्ञोपवीत, चावल, पुष्प, पुष्पमाला, पंचामृत, पिसी हुई हल्दी, सिन्दूर, गुलाल, अबीर, काजल, कण्ठ-सूत्र, धूप, दीपक, अगरबत्ती, विल्पपत्र, दूर्वा, नैवेद्य, पान, सुपारी, लौंग, इलायची, ऋतु के अनुसार फल, नारियल, गंगाजल, कुशासन, भगवती का छत्र व चुन्नी इत्यदि।

मनसा देवी

जय मनसा माता श्री जय मनसा माता
जो नर तुमको ध्याता, जो नर मैया जी को ध्याता
मन-वांछित फल पाता, जय मनसा माता

जरत्कारू मुनि पत्नी, तुम वासुकी भगिनी
मैया तुम वासुकी भगिनी
कश्यप की तुम कन्या आस्तीक की माता । जय०

सुरनर मुनिगण ध्यावत, सेवत नर नारी
मैया सेवत नर नारी
गर्व धन्वन्तरी नाशिनी, हंस वाहिनी देवी
जय नागेश्वरी माता, जय मनसा माता···

पर्वत वासिनी संकट नाशिनी, अक्षय धनदात्री
मैया अक्षय धनदात्री
पुत्र पौत्र दायिनी माता, पुत्र पौत्र दायिनी माता,
मन इच्छा फल दाता, जय मनसा माता···

मनसा जी की आरती जो कोई नर गाता
मैया जो जन नित गाता
कहत शिवानन्द स्वामी, रटत हरीहर स्वामी
सुख सम्पत्ति पाता, जय मनसा माता···

शिवालिक पर्वत (हरिद्वार) के शिखर पर

मनसा देवी का मन्दिर

मन्दिर में दर्शन—मन्दिर में देवी की प्रमुख प्रतिमा तीन सिर व पाँच भुजाओं वाली है। वाम भाग में हवन कुण्ड तथा शीतला देवी का मन्दिर है। दक्षिण भाग में चामुण्डा देवी और श्री लक्ष्मी नारायण जी का मन्दिर है। पश्चिम की ओर शिवजी का प्राचीन मन्दिर है। परिक्रमा में विभिन्न देवी-देवताओं की सुन्दर मूर्तियाँ दीवारों पर बनाई गई हैं।

मनसा देवी के नाम से ही एक मन्दिर हरिद्वार में शिवालिक पर्वत की चोटी पर भी है। इसकी गणना शक्तिपीठों में तो नहीं लेकिन वर्तमान में इसकी मान्यता भी बहुत बढ़ रही है। हरिद्वार जाने वाले यात्री अवश्य इसका दर्शन करते हैं और मनोकामना की सिद्धि के लिए पास ही के एक वृक्ष पर मौली बाँधते हैं। लगभग १ कि. मी. की चढ़ाई पर यह मन्दिर बना है। मन्दिर तक ट्राली में बैठकर भी जा सकते हैं।

मनसा देवी की कथा

(महाभारत के आदि पर्व की एक कथा)

जिस समय जनमेजय का सर्प यज्ञ हो रहा था, तब ब्रह्माजी ने देवताओं से कहा—इस समय जगत् में सर्प बहुत बढ़ गए हैं अत: अब जरत्कारू नाम के एक ऋषि होंगे, उनके पुत्र का नाम होगा आस्तीक। वही जनमेजय का सर्प यज्ञ बन्द करा सकेंगे। देवताओं के पूछने पर ब्रह्माजी ने और भी बतलाया कि जरत्कारू ऋषि की पत्नी का नाम भी जरत्कारू ही होगा। वह सर्पराज वासुकि की बहिन होगी। उसके गर्भ से आस्तीक का जन्म होगा और वही सर्पों को मुक्त करेगा।

तब एलापत्र नाम के नाग ने सर्पराज से कहा हे वासुके! ठीक है, मेरे विचार से भी आपकी बहिन जरत्कारू का विवाह उस जरत्कारू ऋषि से ही होना चाहिए। वे जिस समय भिक्षा के समान पत्नी की याचना करें उसी समय आप उन्हें अपनी बहिन दे दें।

इस बात के थोड़े दिनों बाद ही समुद्र-मंथन हुआ जिसमें वासुकि नाग की नेती (मथने वाली रस्सी) बनाई गई। इसलिए देवताओं ने वासुकि नाग को ब्रह्माजी के पास ले जाकर फिर से वही बात कहलवा दी जो एलापत्र नाग ने कही थी। वासुकि ने सर्पों को जरत्कारू ऋषि की खोज में नियुक्त कर दिया और उनसे कह दिया कि जिस समय जरत्कारू ऋषि विवाह करना चाहें उसी समय शीघ्र से शीघ्र आकर मुझे सूचित करना।

पाठको! इस कथा का क्रम तो और आगे चलेगा ही लेकिन हम आपको पहले यह बता दें कि जरत्कारू ऋषि की पत्नी जरत्कारू ही बाद में 'मनसा देवी' के नाम से विख्यात हुई। कथा के इतिहास के अनुसार ऋषि जरत्कारू ने यह प्रण किया था कि मुझे मेरे ही नाम वाली कन्या मिल जायेगी और वो भी भिक्षा की तरह, जिसके भरण-पोषण का भार मेरे ऊपर न रहे तो मैं उसे पत्नी रूप में स्वीकार कर लूंगा। ऐसा होने पर ही मैं विवाह करूँगा अन्यथा नहीं। तब पितरों की अभिलाषा (मनसा) पूरी करने, (जिसके बारे में आप आगे पढ़ेंगे) देवताओं की इच्छा (मनसा) पूरी करने और स्वयं ऋषि की प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए वासुकि नाग की

बहिन जरत्कारू का नाम सबकी मनसा पूरी करने के कारण 'मनसा देवी' ही अधिक विख्यात हुआ।

जरत्कारू ऋषि की कथा—हे सूतनन्दन ! आपने जिन जरत्कारू ऋषि के बारे में कहा है उनका जरत्कारू ये नाम क्यों पड़ा था ? उसके नाम का अर्थ क्या है और उनसे आस्तीक का जन्म कैसे हुआ ?

'जरा' शब्द का अर्थ है क्षय 'कारु' शब्द का अर्थ है दारुण। तात्पर्य ये है कि उनका शरीर पहले बड़ा दारुण अर्थात् हट्टा-कट्टा था। पीछे उन्होंने तपस्या करके उसे क्षीण बना लिया इसी से उसका नाम 'जरत्कारु' पड़ा। बासुकि नाग की बहिन भी पहले वैसी ही थी उसने भी अपने शरीर को तपस्या के द्वारा क्षीण कर लिया इसलिए वह भी जरत्कारु कहलाई।

राजा परीक्षत का राज्य काल था। तब जरत्कारु ऋषि बहुत दिनों तक ब्रह्मचर्य धारण करके तपस्या में संलग्न रहे। वे जप, तप और स्वाध्याय में लगे रहते तथा निर्भय होकर स्वच्छन्द रूप से पृथ्वी पर घूमते थे। मुनि-वर का नियम था कि जहाँ सन्ध्या हो जाती वहीं ठहर जाते थे। वे पवित्र तीर्थों में जाकर स्नान करते और ऐसे कठोर नियमों का पालन करते जिनकी पालना सामान्य व्यक्ति के लिए असम्भव थी। वे केवल वायु पीकर निराहार रहते। इस प्रकार उनका शरीर तृणवत सूख गया था। एक दिन यात्रा करते समय उन्होंने देखा कि कुछ पितर नीचे की ओर मुंह किये एक गड्ढे में लटक रहे हैं। वे एक खस का तिनका पकड़े हुए थे और वही केवल बच भी रहा था। उस तिनके की जड़ को भी धीरे-धीरे एक चूहा कुतर रहा था। पितृगण निराहार थे, दुबले और दुखी थे, जरत्कारु ने उनके पास जाकर पूछा—आप लोग जिस खस के तिनके का सहारा लेकर लटक रहे हैं, उसे एक चूहा कुतरता जा रहा है। आप लोग कौन हैं ? जब इस खस की जड़ कट जाएगी, तब आप लोग नीचे की ओर मुंह किए गढ़े में गिर जाएँगे। आप लोगों को इस अवस्था में देखकर मुझे बड़ा दुःख हो रहा है। मैं आपकी क्या सेवा करूँ ? आप लोग मेरी तपस्या के चौथे, तीसरे अथवा आधे भाग से इस विपत्ति से बचाए जा सकें तो बतलावें। और तो क्या, मैं अपनी सारी तपस्या का फल देकर भी आप लोगों को बचाना चाहता हूँ। आप आज्ञा कीजिए।

पितरों ने कहा—'आप बूढ़े ब्रह्मचारी हैं, हमारी रक्षा करना चाहते हैं, परन्तु हमारी विपत्ति तपस्या के बल से नहीं टल सकती। तपस्या का फल तो हमारे पास भी है। परन्तु वंश परम्परा के नाश के कारण हम इस घोर नरक में गिर रहे हैं।' आप वृद्ध होकर करुणावश हमारे लिए चिन्तित हो रहे हैं, इसलिए हमारी बात सुनिये। हम लोग यायावर नाम के ऋषि

हैं। वंश परम्परा क्षीण हो जाने से हम पुण्य-लोकों से नीचे गिर गए हैं। हमारे वंश में अब केवल एक ही व्यक्ति रह गया है, वह भी नहीं के बराबर है। हमारे अभाग्य से वह तपस्वी हो गया है, उसका नाम जरत्कारु है। वह वेद-वेदांगों का विद्वान तो है ही, संयमी उदार और व्रतशील भी है। उसने तपस्या के लोभ से हमें संकट में डाल दिया है। उसके कोई भाई-बन्धु अथवा पत्नी-पुत्र नहीं है। इसी से हम लोग बेहोश होकर अनाथ की तरह गढ़े में लटक रहे हैं। यदि वह आपको कहीं मिले तो उससे इस प्रकार कहना—जरत्कारु ! तुम्हारे पितर नीचे मुंह करके गढ़े में लटक रहे हैं। तुम विवाह करके सन्तान उत्पन्न करो। अब हमारे वंश के तुम्हीं एक आश्रय हो। ब्रह्मचारी जी ! यह जो आप खस की जड़ देख रहे हैं, यही हमारे वंश का सहारा है। हमारी वंश परम्परा के जो लोग नष्ट हो चुके हैं, वही इसकी कटी हुई जड़ें हैं। यह अधकटी जड़ ही जरत्कारु है। जड़ कुतरने वाला चूहा महाबली काल है, यह एक दिन जरत्कारु को भी नष्ट कर देगा, तब हम लोग और भी विपत्ति में पड़ जाएँगे। आप जो कुछ देख रहे हैं वह सब जरत्कारु से कहिएगा. कृपा करके यह बतलाइये कि आप कौन हैं और हमारे बन्धु की तरह हमारे लिए क्यों शोक कर रहे हैं ?

पितरों की बात सुनकर जरत्कारु को बड़ा शोक हुआ। उनका गला रुंध गया, उन्होंने गद्गद् वाणी से अपने पितरों से कहा—आप लोग मेरे ही पिता और पितामह हैं। मैं आप लोगों का अपराधी पुत्र जरत्कारू हूँ। आप लोग मुझ अपराधी को दण्ड दीजिए और मेरे करने योग्य काम बतलाइये। पितरों ने कहा—'बेटा बड़े सौभाग्य की बात है कि तुम संयोगवश यहाँ आ गए। भला, बताओ तो तुमने अब तक विवाह क्यों नहीं किया ? जरत्कारु ने कहा—पितृगण ! मेरे हृदय में यह बात घूमती रहती थी कि मैं अखण्ड ब्रह्म-चर्य का पालन करके स्वर्ग प्राप्त करूँ। मैंने अपने मन में यह दृढ़ संकल्प कर लिया था कि मैं कभी विवाह नहीं करूँगा। परन्तु आप लोगों को उलटे लटकते देखकर मैंने अपना ब्रह्मचर्य का निश्चय पलट दिया है। अब मैं आप लोगों के लिए निःसन्देह विवाह करूँगा। यदि मुझे मेरे ही नाम की कन्या मिल जाएगी और वह भी भिक्षा की तरह, तो मैं उसे पत्नी के रूप में स्वी-कार कर लूँगा, परन्तु उसके भरण-पोषण का भार नहीं उठाऊँगा। ऐसी सुविधा मिलने पर ही मैं विवाह करूँगा, अन्यथा नहीं। आप लोग चिन्ता मत कीजिए। आपके कल्याण के लिए मुझसे पुत्र होगा और आप परलोक में सुख से रहेंगे।

जरत्कारु अपने पितरों से इस प्रकार कहकर पृथ्वी पर विचरने लगे। परन्तु एक तो उन्हें बूढ़ा समझकर कोई उनसे अपनी कन्या ब्याहना नहीं

चाहता था और दूसरे उनके अनुरूप कन्या मिलती भी नहीं थी। वे निराश होकर वन में गए और पितरों के हित के लिए तीन बार धीरे-धीरे बोले—मैं कन्या की याचना करता हूँ। यहाँ जो भी चर-अचर अथवा गुप्त या प्रकट प्राणी हैं, वे मेरी बात सुनें। मैं पितरों का दुःख मिटाने के लिए उनकी प्रेरणा से कन्या की भीख माँग रहा हूँ। जिस कन्या का नाम मेरा ही हो, जो भिक्षा की तरह मुझे दी जाय और जिसके भरण-पोषण का भार मुझ पर न रहे, ऐसी कन्या मुझे प्रदान करो। वासुकि नाग के द्वारा नियुक्त सप जरत्कारू की बात सुनकर नागराज के पास गए और उन्होंने चटपट अपनी बहिन लाकर भिक्षा रूप से जरत्कारू ऋषि को समर्पित की। जरत्कारू ऋषि ने उसके नाम और भरण-पोषण की बात जाने बिना अपनी प्रतिज्ञा के विपरीत उसे स्वीकार नहीं किया और वासुकि से पूछा कि—'इसका क्या नाम है ?' और साथ ही यह भी कहा कि—'मैं इसका भरण-पोषण नहीं करूँगा।'

वासुकि नाग ने कहा—'इस तपस्विनी कन्या का नाम भी जरत्कारू है और यह मेरी बहिन है। मैं इसका भरण-पोषण और रक्षण करूँगा। आपके लिए ही मैंने इसे अब तक रख छोड़ा है। जरत्कारू ऋषि ने कहा—मैं इसका भरण-पोषण नहीं करूँगा, यह शर्त तो हो ही चुकी। इसके अतिरिक्त एक शर्त यह है कि यह कभी मेरा अप्रिय कार्य न करे। करेगी तो मैं इसे अवश्य छोड़ दूंगा। जब नागराज वासुकि ने उनकी शर्त स्वीकार कर ली, तब वे उनके घर गये। वहाँ विधि-पूर्वक विवाह-संस्कार सम्पन्न हुआ। जरत्कारू ऋषि अपनी पत्नी ज़रत्कारू के साथ वासुकि नाग के श्रेष्ठ भवन में रहने लगे उन्होंने अपनी पत्नी को भी शर्त की सूचना दे दी कि 'मेरी रुचि के विरुद्ध न तो कुछ करना और न कहना।' वैसा करोगी तो मैं तुम्हें छोड़कर चला जाऊँगा। उनकी पत्नी ने स्वीकार किया और वह सावधान रहकर उनकी सेवा करने लगी। समय पर उसे गर्भ रह गया और धीरे-धीरे बढ़ने लगा।

एक दिन की बात है कि जरत्कारू ऋषि कुछ खिन्न से होकर अपनी पत्नी की गोद में सिर रखकर सोये हुए थे। वे सो ही रहे थे कि सूर्यास्त का समय हो गया। ऋषि-पत्नी ने सोचा कि पति को जगाना धर्म के अनुकूल होगा या नहीं ? ये बड़े कष्ट उठाकर धर्म का पालन करते हैं। कहीं जगाने या न जगाने से मैं अपराधिनी तो नहीं हो जाऊँगी ? जगाने पर इनके कोप का भय है और न जगाने पर धर्म-लोप का। अन्त में वह इस निश्चय पर पहुँची कि ये चाहें कोप करें, परन्तु इन्हें धर्म-लोप से बचाना चाहिए। ऋषि पत्नी ने बड़ी मधुर वाणी से कहा—महाभाग ! उठिए, सूर्यास्त हो रहा है। आचमन करके सन्ध्या कीजिए। यह अग्निहोत्र का समय है। पश्चिम दिशा

लाल हो रही है। ऋषि जरत्कारू जगे। क्रोध के मारे उनका होंठ काँपने लगा। उन्होंने कहा—सर्पिणी! तूने मेरा अपमान किया है। अब मैं तेरे पास नहीं रहूँगा। जहाँ से आया हूँ, वहीं चला जाऊँगा। मेरे हृदय में यह दृढ़ निश्चय है कि मेरे सोते रहने पर सूर्य अस्त नहीं हो सकते थे। अपमान के स्थान पर रहना अच्छा नहीं लगता, अब मैं जाऊँगा। अपने पति की हृदय में कंपकपी पैदा करने वाली बात सुनकर ऋषि-पत्नी ने कहा—भगवन्! मैंने अपमान करने के लिए आपको नहीं जगाया है। आपके धर्म का लोप न हो, मेरी यही दृष्टि थी। जरत्कारू ऋषि ने कहा—एक बार जो मुंह से निकल गया, वह झूठा नहीं हो सकता। मेरे तुम्हारे बीच इस प्रकार की शर्त तो पहले ही हो चुकी है। तुम मेरे जाने के बाद अपने भाई से कहना कि वे चले गए। यह भी कहना कि मैं यहाँ बड़े सुख से रहा। मेरे जाने के बाद तुम किसी प्रकार की चिन्ता मत करना।

ऋषि-पत्नी शोकग्रस्त हो गई। उसका मुंह सूख गया, वाणी गद्‌गद् हो गई। आँखों में आँसू भर आए। उसने कांपते हृदय से धीरज धरकर हाथ जोड़कर कहा—धर्मज्ञ! मुझ निरपराध को मत छोड़िए। मैं धर्म पर अटल रहकर आपके प्रिय और हित में संलग्न रहती हूँ। मेरे भाई ने एक प्रयोजन लेकर आपके साथ मेरा विवाह किया था। अभी वह पूरा नहीं हुआ। हमारे जाति-भाई कद्रू-माता के श्राप से ग्रस्त हैं। आपसे एक सन्तान होने की आवश्यकता है। उसी से हमारी जाति का कल्याण होगा। आपका और मेरा संयोग निष्फल नहीं होना चाहिए। अभी मेरे गर्भ से सन्तान भी तो नहीं हुई! फिर आप मुझ निरपराध अबला को छोड़कर क्यों जाना चाहते हैं? पत्नी की बात सुनकर ऋषि ने कहा—तुम्हारे पेट में अग्नि के समान तेजस्वी गर्भ है। वह बहुत बड़ा विद्वान् और धर्मात्मा ऋषि होगा। यह कहकर जरत्कारू ऋषि चले गये।

पति के जाते ही ऋषि-पत्नी अपने भाई वासुकि के पास गई और उनके जाने का समाचार सुनाया। यह अप्रिय घटना सुनकर वासुकि को बड़ा कष्ट हुआ। उन्होंने कहा—बहिन! हमने जिस उद्देश्य से उनके साथ तुम्हारा विवाह किया था, वह तो तुम्हें मालूम ही है। यदि उनके द्वारा तुम्हारे गर्भ से पुत्र हो जाता तो नागों का भला होता। वह पुत्र ब्रह्माजी के कथनानुसार अवश्य ही जनमेजय के यज्ञ से हम लोगों की रक्षा करता। बहिन! तुम उनके द्वारा गर्भवती हुई हो न? हम चाहते हैं कि तुम्हारा विवाह निष्फल न हो। अपनी बहिन से भाई का यह पूछना उचित नहीं है, फिर भी प्रयोजन के गौरव को देखते हुए मैंने यह प्रश्न किया है। मैं जानता हूँ कि जब उन्होंने एक बार जाने की बात कह दी तो उन्हें लौटाना असम्भव

है। मैं उनसे इसके लिए कहूँगा भी नहीं, कहीं वे मुझे शाप न दे दें। बहिन! तुम सब बात मुझसे कहो और मेरे हृदय से यह संकट का काँटा निकाल दो। ऋषि-पत्नी ने अपने भाई वासुकि नाग को ढाँढ़स बँधाते हुए कहा-- भाई! मैंने भी उनसे यह बात कही थी। उन्होंने कहा है कि गर्भ है। उन्होंने कभी विनोद से भी कोई झूठी बात नहीं कही है। फिर इस संकट के अवसर पर तो उनका कहना झूठ हो ही कैसे सकता है। उन्होंने जाते समय मुझसे कहा कि नागकन्ये! अपनी प्रयोजन सिद्धि के सम्बन्ध में कोई चिन्ता नहीं करना। तुम्हारे गर्भ से अग्नि और सूर्य के समान तेजस्वी पुत्र होगा। इस-लिए भाई! तुम अपने मन में किसी प्रकार का दुःख न करो। यह सुनकर वासुकि बड़े प्रेम और प्रसन्नता से अपनी बहिन का स्वागत-सत्कार करने लगा और उसके पेट में शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान गर्भ भी बढ़ने लगा।

समय आने पर वासुकि की बहिन जरत्कारू के गर्भ से एक दिव्य कुमार का जन्म हुआ। उसके जन्म से मातृवंश और पितृवंश दोनों का भय जाता रहा। क्रमशः बड़ा होने पर उसने च्यवन मुनि से वेदों का साङ्गोपाङ्ग अध्ययन किया। वह ब्रह्मचारी बालक बचपन में ही बड़ा बुद्धिमान और सात्विक था। जब वह गर्भ में था, तभी पिता ने उसके सम्बन्ध में 'अस्ति' (है) पद का उच्चारण किया था, इसलिए उसका नाम 'आस्तीक' हुआ। नागराज वासुकि के घर पर बाल्य अवस्था में बड़ी सावधानी और प्रयत्न से उसकी रक्षा की गई। थोड़े ही दिनों में वह बालक इन्द्र के समान बढ़कर नागों को हर्षित करने लगा। इसी बालक अर्थात् 'आस्तीक' ने सर्पों को मुक्तिप्रदान की और जरत्कारू और ऋषि के पितरों का दुःख भी दूर किया। ऋषि-पत्नी और नागराज वासुकि की बहिन, सबकी मनसा को पूर्ण करने के कारण, 'मनसा देवी' नाम से विख्यात हुई।

●●

शाकुम्भरी देवी

भारत के सबसे बड़े प्रान्त उत्तर प्रदेश में सहारनपुर नगर से लगभग २५ मील दूर शिवालिक की पर्वत मालाओं में यह प्रसिद्ध मन्दिर है। शाकुम्भरी देवी की गणना प्रसिद्ध शक्तिपीठों में की जाती है। यहाँ पर सती का शीश गिरा था। इस मन्दिर की प्रतिमा के दाईं ओर भीमा एवं भ्रामरी तथा बाईं ओर शीताक्षी देवी प्रतिष्ठित हैं। शीताक्षी देवी को शीतला देवी के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। नवरात्रों में तथा दुर्गाष्टमी पर यहाँ भारी मेले भरते हैं।

शाकुम्भरी देवी की कथा

(श्री शिवमहापुराण के नवम् खण्ड 'उमा संहिता' से)

एक महापराक्रमी गुरू हुए, उनका नाम दुर्गम हुआ। उसने ब्रह्माजी से वरदान में चारों वेदों की प्राप्ति की और यह वर भी लिया कि युद्ध में मुझे कोई देवता भी न जीत सके। इसके पश्चात् वह पृथ्वी पर अनेक उपद्रव करने लगा। युद्ध करके उसने इन्द्र को परास्त कर दिया। तदन्तर पृथ्वी पर सौ वर्षों तक वर्षा नहीं हुई, चूँकि इन्द्र देवता दुर्गम के आधीन हो गये। किसी प्राणी को जल मिला ही नहीं। वेदों के न रहने पर सब क्रियाएँ जाती रहीं और ब्राह्मणों ने अपना धर्म त्याग दिया।

प्रजा के संकट को देखकर देवतागण महादेवी की शरण में आए— और कहने लगे— जिस प्रकार आपने शुम्भ और निशुम्भ का बध किया,

उसी तरह आप इस दुष्ट का भी वध करें। इस प्रकार प्रजा को दुखी देख-कर देवी ने अपने नेत्रों को दया के जल से भर लिया और सौ नेत्रों द्वारा देवताओं तथा मुनियों की ओर देखा। उस जल से हजारों धाराएँ बहने लगीं, जिनसे सम्पूर्ण वृक्ष एवं औषधियाँ हरी-भरी हो गईं। नदियाँ, तालाब, समुद्र आदि जल से परिपूर्ण हो गए, इस प्रकार देवताओं का कष्ट दूर हुआ। एक सौ नेत्रों द्वारा प्रजा की ओर दयापूर्ण दृष्टि से देखने के कारण देवताओं ने 'शताक्षी' नाम से देवी का पूजन-कीर्तन किया। जब सारे संसार में वर्षा नहीं हुई थी, उस समय शताक्षी देवी ने अपने शरीर से उत्पन्न शाक (साग-सब्जी) द्वारा संसार का पालन किया। इसी कारण वह पृथ्वी पर शाकुम्भरी देवी के नाम से प्रसिद्ध हो गईं।

देवी बोली– हे देवताओ! अब मैं तुम्हारा क्या उपकार करूँ? तब देवताओं ने प्रार्थना की कि दुर्गम द्वारा चुराये गए चारों वेद हमें मिल जाएँ। देवी ने कहा—ऐसा ही होगा। तब देवी ने घोर संग्राम करके दुर्गम का वध कर दिया और वेदों को प्राप्त किया। दुर्गम दैत्य का वध करने के कारण उनका दुर्गा-देवी नाम भी प्रसिद्ध हो गया। वास्तव में लोक प्रसिद्ध शताक्षी, शाकुम्भरी तथा दुर्गा, ये एक ही देवी के नाम हैं।

शाकुम्भरी देवी का स्वरूप कैसा है ?

शाकुम्भरी देवी के स्वरूप का विस्तृत वर्णन श्री दुर्गा सप्तशती के अन्त में 'मूर्ति रहस्य' के अन्तर्गत मिलता है—उसके अनुसार—श्री शाकुम्भरी देवी के शरीर का रंग नीला है। उसकी आँखें नील-कमल के समान हैं। नाभि नीची है एवं त्रिवली (सुन्दरता द्योतक तीन रेखाओं) से युक्त सूक्ष्म कटि भाग वाली हैं। अत्यन्त कठिन, बराबर गोल, मोटे और मांसल स्तनों वाली हैं। वे कमल पर बैठती हैं। उनकी एक मुट्ठी में कमल का एक फूल रहता है, जो कि भँवरों से घिरा रहता है। दूसरी मुट्ठी बाणों से भरी रहती है। फूल, पल्लव, कन्द-मूल आदि अनेक फलों से युक्त, इच्छित अनेक रसों से परिपूर्ण एवं भूख-प्यास-मृत्यु-बुढ़ापा को दूर करने वाले अनेकानेक शाक-समूह से उनकी मुट्ठियाँ परिपूर्ण हैं (अर्थात् यह सभी उनके हाथ में है)। वे परमेश्वरी अत्यन्त तेजस्वी धनुष को धारण करती हैं। वे ही देवी शाकुम्भरी हैं, शताक्षी हैं और दुर्गा नाम से भी वे ही कही जाती हैं। वे ही महान् आपत्तियों और महाशोक को दूर करने वाली एवं दुष्टों का दमन करने वाली हैं। श्री शाकुम्भरी देवी की स्तुति, ध्यान, जप, पूजन और नमस्कार करने वाला मनुष्य शीघ्र ही अन्न, जल और अमृतरूपी अक्षय फल भोगता है।

शाकुम्भरी देवी

हरि ॐ श्री शाकुम्भर अम्बा जी की आरती कीजो
ऐसो अद्भुत रूप हृदय धर लीजो
शताक्षी दयालु की आरती कीजो।

तुम परिपूर्ण आदि भवानी मां
सब घट तुम आप बखानी माँ
शाकुम्भर अम्बा जी की आरती कीजो...

तुम्हीं हो शाकुम्भरी, तुम ही हो शताक्षी माँ
शिव मूर्ति माया, तुम ही हो प्रकाशी मां
श्री शाकुम्भर...

नित जो नर-नारी अम्बे आरती गावे माँ
इच्छा पूरण कीजो, शाकुम्भरी दर्शन पावे मां
श्री शाकुम्भर...

जो नर आरती पढ़े पढ़ावे माँ
जो नर आरती सुने सुनावे माँ
बसे बैकुण्ठ शाकुम्भर दर्शन पावे, श्री शाकुम्भर...

माता दा मुकुट ते पायल
(सवाल जवाब)
मुकुट कहता है कि मैं बड़ा हूँ !
पायल कहती है मैं तुझसे बड़ी हूँ !!
भगवान दास शर्मा 'खामोश' की लेखनी से निकले रोचक सवाल-जवाब; साथ में अन्य कई भेंटें धार्मिक व देश-प्यार के गीत, माता के बारह माह तथा शिवजी का ब्याह।
पुस्तक का मूल्य केवल तीन रूपए
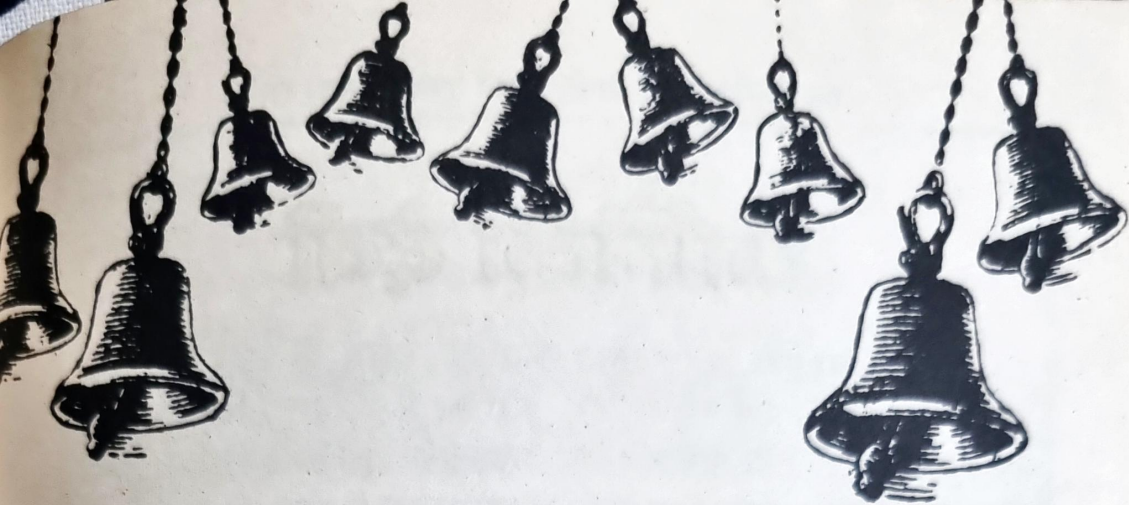
कालिका देवी

श्री काली देवी का सर्वप्रसिद्ध शक्तिपीठ भारत के प्रमुख नगर कलकत्ता में स्थित है। यहाँ पर भगवती सती के 'केश' (बाल) गिरे थे। यहाँ श्री काली देवी के तीन मन्दिर क्रमशः रक्ताम्बरा, मुण्डमालिनी तथा नुक्केशिनी नामों से हैं। परन्तु प्रिय पाठकों! इस पुस्तक में हमने श्री काली माता के एक अन्य प्रभावशाली भवन को सम्मिलित किया है। चण्डीगढ़ से कुछ दूरी पर, शिमला जाने वाले मार्ग में 'कालिका जी' नाम से एक स्टेशन है, जहाँ से शिमला जाने के लिए रेल की छोटी लाईन प्रारम्भ होती है। यहाँ

कालिका मन्दिर
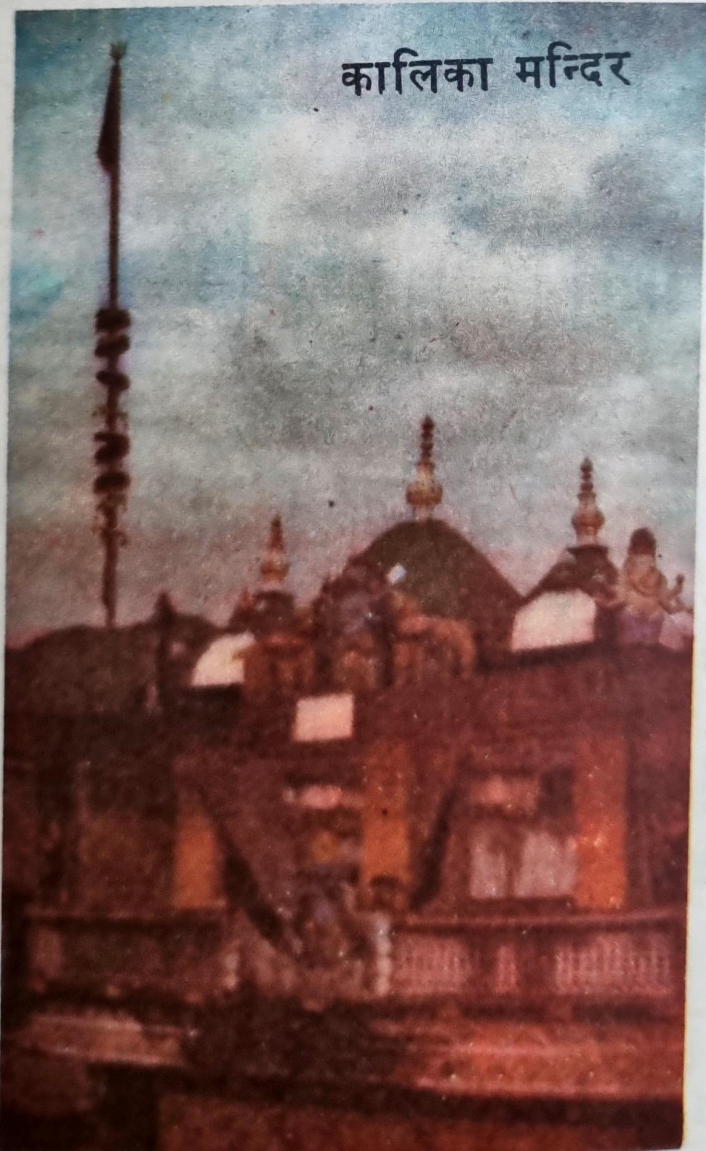
पर आदि भगवती श्री कालिका देवी का एक छोटा, परन्तु अत्यन्त तेजस्वी एवं प्रभावशाली मन्दिर स्थित है। इसी मन्दिर के नाम से कस्बे को 'कालिका' पुकारा जाता है। इसकी मान्यता के विषय में ऐसा कहा जाता है कि माता के बुलाने पर भक्त-जन चुम्बक की भाँति यहां खिंचे चले आते हैं। श्री कालिका मन्दिर के पुजारियों द्वारा माता के अनेक चमत्कारों की घट-

नाएँ सुनने को मिलती हैं। पुजारियों की ऐसी मान्यता है कि सती के केशों के कुछ अंश इस स्थान पर भी गिरे थे। यद्यपि इसकी गणना शक्तिपीठों में नहीं है, तथापि स्थान के प्रभाव एवं माता के चमत्कारों के कारण इसकी मान्यता बहुत अधिक है। मन्दिर में माता के दर्शन पिण्डी के रूप में किए जाते हैं।

श्री कालिका मन्दिर की कथा

(महाराजा जयसिंह देव का इतिहास)

एक दन्त-कथा के अनुसार बहुत प्राचीन काल में यहां राजा जयसिंह देव का राज्य था, जिन्होंने इस मन्दिर में श्री कालिका देवी की एक प्रतिमा स्थापित की थी। एक बार नवरात्रों के अवसर पर भगवती जागरण हो रहा था। राजमहल की स्त्रियाँ इकट्ठे होकर कालिका जी का स्तवन गान करती थीं। बड़े आनन्द का समय था। तब स्वयं भगवती एकदिव्य-स्त्री का वेश धारण करके, उन राज-स्त्रियों में सम्मिलित हो कीर्तन करने लगी। इस अवसर पर महाराजा जयसिंह देव भी उपस्थित थे। वह मां की लीला को समझ न पाए और भगवती की मधुर ध्वनि एवं दिव्य सौन्दर्य देखकर, मोहित हो गए। कीर्तन की समाप्ति पर कामातुर राजा ने देवी का हाथ पकड़ लिया। देवी ने कहा—मैं प्रसन्न हूँ, तू वर मांग ले, क्या चाहता है? उत्तर में राजा ने प्रणय निवेदन कर दिया, मैं आप से विवाह करना चाहता हूँ। बस फिर क्या था? कालिका क्रोधित हुईं और उन्होंने श्राप दे दिया कि जिस राज्य के अभिमान में तेरा यह साहस हुआ है उसके सहित तेरा सर्वनाश हो जाएगा। इतना कहकर भगवती अदृश्य हो गई। तब मन्दिर में सिंह गर्जन होने लगा। पर्वत जमीन में धंसने लगे और श्री कालिका जी की मूर्ति भी पहाड़ में प्रवेश करने लगी।

मन्दिर के पिछले भाग में एक महात्मा जी रहते थे। उन्होंने माता कालिका की विशेष पूजा-आराधना करते हुए विनती की—हे मातेश्वरी! हे महामाया! बस अब क्षमा करो। तब देवी की वह मूर्ति उसी रूप में पहाड़ के साथ वैसी ही अवस्था में रह गई। आज भी देवी का केवल सिर दिखाई देता है। देवी के श्राप का फल यह हुआ कि शत्रुओं ने राजा जयसिंह देव पर चढ़ाई कर दी और राजा अपने दोनों पुत्रों सहित मारा गया। पूरा नगर कालिका जी के श्राप के कारण नष्ट हो गया। इस स्थान पर बिल्कुल उजाड़ हो गया था। राज्य का कहीं नामोनिशान न रहा। वर्तमान कस्बे का निर्माण उसके कई वर्षों उपरान्त हुआ माना जाता है।

—※—

कालिका देवी

अम्बे तू है जगदम्बे काली जय दुर्गे खप्पर वाली
तेरे ही गुन गायें भारती ओ मैया हम सब उतारें
तेरी आरती···

तेरे भक्त जनों पर माता भीड़ पड़ी है भारी
दानव दल पर टूट पड़ो माँ करके सिंह सवारी
सौ-सौ सिंहों से है बलशाली है दस भुजा वाली
दुखियों के दुखड़े निवारती । ओ मैया—

मां बेटे का है इस जग में बड़ा ही निर्मल नाता
पूत कपूत सुने हैं पर ना माता सुनी कुमाता
सब पे करुणा दरसाने वाली अमृत बरसाने वाली
दुखियों के दुखड़े निवारती । ओ मैया—

नहीं माँगते धन और दौलत न चांदी न सोना
हम तो माँगें माँ तेरे मन में एक छोटा सा कोना
सबकी बिगड़ी बनाने वाली लाज बचाने वाली
सतियों के सत को संवारती । ओ मैया—

—※—